प्रकाशकीय

महात्मा गान्धी की वर्षगाँठ मनाने के लिए कांग्रेस कार्यकर्ताओं की एक सभा टाउनहॉल में बुलाई गयी थी। उस सभा में सर्व-सम्मति से यह निश्चय किया गया कि महात्माजी के लेखों एवं वक्तव्यों का सुन्दर, शुद्ध एवं लोकोपकारी संग्रह पुस्तकाकार में प्रकाशित किया जाय। पुस्तक व्यवसायी होने के नाते यह कार्य मुझे सौंप दिया गया जिसे हमने सहर्ष स्वीकार किया।

देश की प्रत्येक समुदाय के प्रति गान्धीजी के क्या उपदेश हैं इसको दृष्टि में रखते हुए प्रत्येक समुदाय के लिए पृथक् संग्रह का कार्य मैंने तत्काल आरम्भ कर दिया। फलतः 'विद्यार्थियों से' 'महिलाओं से' और 'स्वास्थ्य-ब्रह्मचर्य' नामक तीन पुस्तकों के लिए सामग्री तैयार हो गयी।

बन्धुओ! उक्त तीनों संग्रह एक साथ पुस्तकाकार प्रकाशित हो गये हैं। गान्धीजी भारत के युगकर्ता एवं महान् विचारक हैं। आशा है, आप इन पुस्तकों का अधिक-से-अधिक प्रचार एवं प्रसार करेंगे।

श्री गान्धी ग्रन्थागार
पुराम, सोनबानी, बलिया
सन् १९४८ ई०

संचालक
रमाशंकर लाल

विषय-सूची

१–स्वास्थ्य	११
२–हमारा शरीर	१२
३–वायु	१५
४–जल	२०
५–भोजन	२५
६–भोजन की मर्यादा	४४
७–व्यायाम	४७
८–पोशाक (पहिनावा)	५१
९–पुरुष-स्त्री का संयोग	५५
१०–वायु-चिकित्सा	६३
११–जल-चिकित्सा	६५
१२–मिट्टी-चिकित्सा	७१
१३–ज्वर और उसकी चिकित्सा	७४
१४–कब्ज, संग्रहणी, पेचिश और बवासीर	७६
१५–छूत के रोग–शीतला (चेचक)	७९
१६–छूत के अन्य दूसरे रोग	८६
१७–सौरी और जच्चा-बच्चा	९०
१८–शिशु-पालन	९३
१९–कुछ आकस्मिक घटनाएँ डूबना, जलना, सर्प का काटना, बिच्छू का काटना	९७
२०–उपसंहार	१०९

प्रस्तावना

बीस वर्ष से भी अधिक समय से मैं स्वास्थ्य सम्बन्धी विषयों पर विचार करता रहा हूँ। जब मैं इंगलैंड में था, तब अपने विशेष रहन-सहन के कारण मुझे अपने खाने-पीने का खास प्रबन्ध करना पड़ता था। इन कारणों से मेरा जो कुछ अनुभव इस विषय में हुआ है, उसे सत्य ही मानना चाहिये। उसी अनुभव के आधार पर मैंने कुछ खास विचारों को स्थिर किया है और उन्हीं को अपने पाठकों के लाभार्थ लिख रहा हूँ।

अँग्रेजी में कहावत है कि "रोग दूर करने की अपेक्षा उसे न होने देना ही अच्छा है।" रोगों को होने देने से उसे रोक देना बहुत सुगम तथा लाभदायक है क्योंकि वे अधिकांश में हमारी अज्ञानता असावधानी से हुआ करते हैं। अतः यह सभी विचारशील मनुष्यों का कर्तव्य है कि वे स्वास्थ्य के नियमों को अच्छी तरह समझें। इस पुस्तक के लिखने का मुख्य उद्देश्य उन्हीं नियमों को समझना है। साथ ही कुछ साधारण रोगों का उपचार भी बतलाना है।

एक अंग्रेज विद्वान् मिल्टन का कथन है कि हम चाहें तो स्वर्ग को नर्क और नर्क को स्वर्ग बना सकते हैं। यह बात हमारे आधीन है। स्वर्ग कहीं आसमान में नहीं है, और न नर्क जमीन के अन्दर। यही बात एक संस्कृत के श्लोक में भी कही गयी है कि "मन एव मनुष्या-णाम् कारणम् बन्धमोक्षयः" अतः रोगी या नीरोग रहना मनुष्य के अधिकार की बात है। रोग केवल हमारे कर्मों का ही फल नहीं है, बल्कि विचारों का भी फल है। एक डाक्टर का कहना है कि मनुष्य

यह हमारा कर्तव्य है कि इस कठिनाई को दूर करें । प्रत्येक व्यक्ति का यह धर्म है कि वह अपने शरीर के संबंध में पर्याप्त ज्ञान रक्खे । हमारे स्कूलों में भी ऐसी शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये । अभी हमें साधारण फोड़े-फुन्सियों का भी उपचार नहीं मालूम है यहाँ तक कि यदि हमारे पैर में काँटा चुभ जाय, तो हम अपनी असमर्थता दिखलाते हैं । यदि हमें साँप काट ले तो हम बिलकुल घबड़ा जाते हैं । यदि इन विषयों पर हम अपनी अज्ञानता का विचार करें, तो हमें लज्जा से अपना सिर नीचा करना पड़ेगा । यह कहना कि साधारण मनुष्य इन बातों को नहीं जान सकता, हमारी निरी मूर्खता है । यह पुस्तक इसी उद्देश्य से लिखी गयी है कि जो इन विषयों को जानना चाहेंगे, आसानी से जान सकेंगे ।

हमारे कहने का यह मतलब कदापि नहीं है कि जो कुछ भी मैंने इस पुस्तक में लिखा है उसे पहिले किसी ने नहीं बतलाया । इसमें पाठकों को खास बात यह मिलेगी कि बहुतेरी पुस्तकों के पढ़ने के बाद तथा निजी अनुभव प्राप्त करने के बाद यह पुस्तक सिलसिलेवार लिखी गयी है । इसके अतिरिक्त वे लोग जिनके लिये यह एक नया विषय है, ऐसी विरोधी बातों में पड़ने से बच सकते हैं । जिसमें एक ही रोग में किसी डाक्टर की राय है कि गर्म पानी का प्रयोग होना चाहिए और कोई कहता है कि ठंढे पानी का । इन विरोधी विचारों पर मैंने पूर्ण रूप से विचार करके अपना एक निश्चित मत स्थिर किया है, और सब उसका वर्णन इसमें किया है ताकि इसके पढ़ने वाले कही हुई बातों पर पूर्णतः विश्वास करें ।

साधारण रोगों में भी हमें डाक्टर की शरण लेने की आदत सी पड़ गयी है । जहाँ डाक्टर नहीं है, वहाँ हम पड़ोसियों की राय से दवा करने लगते हैं । हम विश्वास कर लेते हैं कि बिना औषधि के यह रोग दूर नहीं हो सकता । अन्य कारणों की अपेक्षा हमें इस

कारण से अधिक दुःख उठाना पड़ता है । हाँ, हमारा रोग छूट जाय यह आवश्यक है, लेकिन वह औषधि से नहीं हट सकता, क्योंकि कभी-कभी औषधि निष्फल ही नही वरन् हानिकारक भी सिद्ध हो जाती है । जड़ी-बूटी या औषधियो से रोग को दबा देना ठीक हो है जैसे कि घर में पड़े कूड़े को ढँक रखना, क्योंकि कूड़े को जितना ही अधिक ढँक रखने का हम उद्योग करते है उतना ही वह शीघ्रता से सड़कर अपना गन्ध फैलाता है । ठीक यही बात रोग को दबाने से भी होती है । अतः बुद्धिमानी यही हो सकती है कि प्राकृतिक ढग से कूड़े और रोग को साफ किया जाय । रोग द्वारा प्रकृति हमें सूचित करती है कि हमारे अन्दर गन्दगी, जो रोगो का घर है इकट्ठा हो रही है और उसे हमें प्राकृतिक क्रिया द्वारा हटाना चाहिए न कि औषधियो द्वारा उसे शरीर के अन्दर ही दबा देना चाहिये । जो लोग औषधियो द्वारा रोग को हटाना चाहते है, वास्तव में वे प्राकृतिक क्रिया को और भी कठिन बनाते है । उपवास द्वारा हम प्राकृतिक क्रिया को और भी शक्तिशाली बना सकते है । इससे हमारे शरीर में गन्दगी इकट्ठा न होने पायेगी । हम अपने शरीर की अधिकांश गन्दगी खुली हवा में रह कर या शरीर से पसीना निकाल कर साफ कर सकते है । इसके अतिरिक्त अपने मन पर अधिकार रखना नितान्त आवश्यक है ।

हम प्रायः यह देखते है कि यदि घर में एक बार भी औषधि के बोतल का प्रवेश हुआ कि उसकी सख्या और भी बढ़ने लगती है । हम बहुत को आजन्म रोग ग्रसित पाते है, यद्यपि वे सदैव औषधियो

सच्चरित्र नहीं है, वह स्वस्थ नहीं कहा जा सकता । वह शरीर जिसमें दूषित विचार भरे पड़े हैं उसे रोग-ग्रसित ही समझना चाहिये। इसलिए यह स्पष्ट होता है कि सच्चरित्रता ही स्वास्थ्य की नींव है । हमलोगों को यह मानना पड़ेगा कि हमारे अन्दर कलुषित विचार भी एक भयानक रोग ही है ।

विचार करने से हम इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि जिसके शरीर का गठन अच्छा है, जिसके दांत और आंख अच्छी दशा में हैं, जिसके कान स्वच्छ हैं, जिसकी त्वचा से दुर्गन्ध-रहित पसीना खूब निकलता है, जिसके मुह से बदबू नहीं आती और जिसके हाथ-पैर अच्छी तरह अपना काम कर लेते हैं, जिसका शरीर औसत दर्जे का है और जिसको अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार है, वही पूर्ण स्वस्थ है ।

ऐसा स्वस्थ शरीर पाना कठिन है और उसे पाकर कायम रखना और भी कठिन है । हम पूर्णतया स्वस्थ नहीं है, इसके मुख्य कारण हमारे माता-पिता हैं । एक प्रसिद्ध लेखक का कहना है कि यदि माता-पिता स्वस्थ हों तो उनकी सन्तान भी उनसे अधिक स्वस्थ होगी । पूर्ण स्वस्थ मृत्यु से नहीं डरता है । मृत्यु से डरना अस्वस्थ होने का चिन्ह है । अस्तु, हमारा कर्तव्य है कि हम अपने को पूर्ण स्वस्थ बनावें । अब हमें यह देखना है कि हम पूर्ण स्वस्थ कैसे हो सकते हैं एवं प्राप्त किये हुए स्वास्थ्य को कैसे स्थिर रख सकते हैं ।

—— ० ——

२—हमारा शरीर

यह संसार आकाश, जल, हवा, अग्नि और पृथ्वी इन पाँच तत्वों से बना है । हमारा शरीर भी इन्ही से बना है। शरीर में इनका

की हड्डियों का विस्तृत विवरण नही दिया जा सका, क्योंकि मुझको भी इसके विषय में पूर्ण ज्ञान नही है । अत. मैं उतना ही विवरण दे रहा हूँ जितना कि हमारे लिए आवश्यक है ।

शरीर का सबसे मुख्य अग पेट है । यदि पेट क्षण भर के लिए भी अपना काम बन्द कर दे तो सारे शरीर की क्रिया बन्द हो जायगी । जो भार उदर के ऊपर रहता है, वह जगली जानवरों के सहन-शक्ति से भी कही बढकर होता है । पेट का काम भोजन पचाना और सारे शरीर को शक्तिशाली बनाना है । पेट का सम्बन्ध शरीर से वैसा ही है जैसा कि रेलवे ट्रेन का भाप के इजिन से । पाचक रस पेट से उत्पन्न होकर भोजन पचाता है । पेट की दाहिनी ओर जिगर और बाईं ओर तिल्ली है । जिगर का काम रक्त साफ करना तथा पित्त उत्पन्न करना है जिससे पाचन में बहुत सहायता मिलती है ।

पसलियों से हृदय और फेफडे दोनो ढंके है । हृदय दोनो फेफडे के मध्य में है, लेकिन इसका झुकाव बायी ओर है । सीने में कुल चौबीस हड्डियाँ है । पाँचवी और छठी पसली के मध्य में दिल की धड़कन महसूस होती है । फेफडे हवा की नली से मिले हुए है जिससे हम लोग साँस लेते है । जो हवा फेफडो में आती है वह अशुद्ध रक्त को साफ बनाती है । मुह की अपेक्षा नाक से साँस लेना लाभप्रद है ।

शरीर की सब हरकतें रक्त-सचार के ऊपर निर्भर है । रक्त ही द्वारा सारे शरीर का पालन होता है । यह भोजन से पुष्टकारक पदार्थ को अपने में ले लेता है और व्यर्थ वस्तु को मलमूत्र के रूप में बाहर निकाल देता है, और इस तरह शरीर को गर्म रखता है । ।. और धमनियों द्वारा रक्त का सचार प्रतिक्षण होता रहता है । ही के सचार से नाड़ी में धड़कन पैदा होती है। स्वस्थ मनुष्य

की हड्डियों का विस्तृत विवरण नहीं दिया जा सका, क्योंकि मुनक्कों भी इसके विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं है । अतः मैं उतना ही विवरण दे रहा हूँ जितना कि हमारे लिए आवश्यक है ।

शरीर का सबसे मुख्य अंग पेट है । यदि पेट क्षण भर के लिए भी अपना काम बन्द कर दे तो सारे शरीर की क्रिया बन्द हो जायगी । जो भाग उदर के ऊपर रहता है, वह जंगली जानवरों के सहन-शक्ति से भी कहीं बढ़कर होता है । पेट का काम भोजन पचाना और सारे शरीर को शक्तिशाली बनाना है । पेट का सम्बन्ध शरीर में वैसा ही है जैसा कि रेलवे ट्रेन का भाप के इंजिन में । पाचक रस पेट से उत्पन्न होकर भोजन पचाता है । पेट की दाहिनी ओर जिगर और बाईं ओर तिल्ली है । जिगर का काम रक्त साफ करना तथा पित्त उत्पन्न करना है जिससे पाचन में बहुत सहायता मिलती है ।

पसलियों से हृदय और फेफड़े दोनों ढँके हैं । हृदय दोनों फेफड़ों के मध्य में है, लेकिन इसका झुकाव बायीं ओर है । सीने में कुल चौबीस हड्डियाँ हैं । पाँचवी और छठी पसली के मध्य में दिल की धड़कन महसूस होती है । फेफड़े हवा की नली से मिले हुए हैं जिससे हम लोग साँस लेते हैं । जो हवा फेफड़ों में आती है वह अशुद्ध रक्त को साफ बनाती है । मुह की अपेक्षा नाक से साँस लेना लाभप्रद है ।

शरीर की सब हरकतें रक्त-संचार के ऊपर निर्भर हैं । रक्त ही द्वारा सारे शरीर का पालन होता है । यह भोजन से पुष्टिकारक पदार्थ को अपने में ले लेता है और व्यर्थ वस्तु को मलमूत्र के रूप में बाहर निकाल देता है, और इस तरह शरीर को गर्म
नसों और धमनियों द्वारा रक्त का संचार प्रतिक्षण
रक्त ही के संचार से नाड़ी में धड़कन

की नाड़ी में एक मिनट में ७५ धड़कनें होती है। बच्चों की अपेक्षा वृद्धों की नाड़ी सुस्त चलती है।

वायु द्वारा रक्त साफ होता है। जब रक्त एक बार शरीर का पूर्ण चक्कर लगा कर फेफड़ों में लौटता है तो वह दूषित तथा जहरीला हो जाता है। आक्सिजन जो वायु में मिलता रहता है, खून को साफ करता है। जब यह साँस द्वारा हमारे फेफड़ों में जाता है तो नाइट्रोजन विषैली वस्तु को लेकर साँस द्वारा बाहर निकल जाता है। यह क्रिया बराबर जारी रहती है।

चूंकि शरीर के लिये वायु अत्यन्त आवश्यक है अत अगले पृष्ठों में इसकी विवेचना करेंगे।

—०—

३—वायु

जीवन के लिए सबसे आवश्यक वस्तु हवा, जल और भोजन है। लेकिन हवा सबसे अधिक आवश्यक है। इसी कारण ईश्वर की कृपा से यह हमें अधिक मात्रा में मिल जाती है और इसके लिए हमें कुछ नहीं देना पड़ता। आधुनिक सभ्यता ने स्वच्छ हवा को कुछ अंशों में अप्राप्य कर दिया है जिसकी प्राप्ति के लिए हमें पैसा लगाकर बाहर जाना पड़ता है। बम्बई के रहने वाले आयेरन या उससे भी अच्छा मालाबार की पहाड़ियों में जाकर स्वास्थ्य लाभ करते हैं, लेकिन सभी इन स्थानों पर बिना पैसा खर्च किये नहीं जा सकते। इसलिए आजकल यह कहना अनुचित ही होगा कि हम लोग स्वच्छ हवा मुफ्त में ही पाते हैं।

हमें मानना पड़ेगा कि हवा के बिना जीवित रहना असम्भव है। हम जानते हैं कि रक्त का संचार सारे शरीर में होता है, फिर फेफड़ों में आता है और शुद्ध होने के बाद पुनः चक्कर लगाता है। साँस द्वारा हम अशुद्ध हवा बाहर निकालते हैं और बाहर से आक्सीजन लेते हैं जिससे रक्त शुद्ध होता है। यह क्रिया बराबर जारी रहती है। इसी के ऊपर मनुष्य का जीवन निर्भर है। पानी में डूबने से हम इसलिए मर जाते हैं कि न तो हम दूषित हवा को बाहर निकाल सकते हैं और न ताजी हवा पा सकते हैं।

गोता लगाने वाले जब पानी में पैठते हैं तो ट्यूब द्वारा बाहर से ताजी हवा मिलती है। इसी कारण वे पानी में देर तक ठहरते हैं। यह अनुभव से सिद्ध हो चुका है कि हवा के बिना मनुष्य पाँच मिनट से अधिक जिन्दा नहीं रह सकता है। बच्चों की मृत्यु हमें अधिक सुनाई पड़ती है। इसका मुख्य कारण उनकी अनभिज्ञ मातायें हैं जो उन्हें ताजी हवा में नहीं रखती हैं।

हम लोग अशुद्ध हवा के उसी प्रकार विरुद्ध हैं जिस प्रकार गन्दे पानी और भोजन के, लेकिन पानी और भोजन की अपेक्षा अशुद्ध हवा के अधिक विरुद्ध हैं। चाहे हम प्यास से मर ही क्यों न जायें, लेकिन दूसरे की कुल्ली किये हुए पानी को कभी भी काम में न लायेंगे। लेकिन दुख की बात यह है कि हम शुद्ध हवा की ओर ध्यान नहीं देते। हम प्रत्येक वस्तु की पूजा करते हैं लेकिन अप्रत्यक्ष एवं लाभदायक वस्तुओं पर ध्यान नहीं देते। बहुत से आदमी एक साथ सोते हैं, लेकिन जो विषैली हवा उस कमरे में गूंजी रहती है उसका हम तनिक भी ध्यान नहीं रखते। दूसरे आदमी का जूठा और जूठा भोजन पीने-खाने के पूर्व हमें अच्छी तरह सोचना चाहिए। यहाँ तक कि वे मनुष्य भी जो भूख और प्यास से मरते हों, ऐसा करने के लिए कभी भी तैयार नहीं होंगे।

लेकिन खेद ! हममें से बहुत कम इसका ध्यान रखते है कि जो हवा हमारे अन्दर प्रवेश करती है, वह अशुद्ध तथा विषैली है। यह कैसी आश्चर्य की बात है कि कई मनुष्य घण्टों एक साथ तग कमरे में सोते है, और एक दूसरे की दूषित हवा अपने अन्दर लेते है। सौभाग्य से हवा एक ऐसी चीज है जो छोटे-से-छोटे रास्ते से भी तग तथा बन्द कमरे में कुछ-न-कुछ प्रवेश करती ही रहती है।

अब हमें विदित हो गया कि क्यो हम लोग निर्बल और रोग-ग्रसित है। अशुद्ध हवा ही इसका मूल कारण है कि आज ६६ प्रतिशत लोग रोगी है। रोग से बचने का सबसे अच्छा उपाय खुली हवा है। इसकी तुलना में डाक्टर कुछ नही है। अशुद्ध वायु से फेफडे खराब हो जाते है और इसी की खराबी से राजयक्ष्मा का रोग होता है जैसे कि खराब कोयले से इजिन खराब हो जाता है। अत डाक्टर की राय है कि राजयक्ष्मा के रोगी को २४ घण्टा खुली और ताजी हवा में रखना चाहिये। यही सबसे उत्तम औषधि है।

फेफडों के अतिरिक्त शरीर के छोटे-छोटे छिद्रो द्वारा भी शरीर में हवा प्रवेश करती है। हमें यह जानना आवश्यक है कि हवा कैसे शुद्ध रह सकती है। इस बात को कम लोग महसूस करते है कि गन्दे पाखाने बहुत हानिप्रद है। कुत्ते और बिल्ली भी जमीन खुरेच कर टट्टी करते है और उसे मिट्टी से ढँक देते है। जहाँ पर आधुनिक ढग के पाखानो का अभाव है वहाँ हमें भी ऐसा ही करना चाहिये। एक टीन में राख या मिट्टी भर कर मल-मूत्र पर डालने के लिए रखनी चाहिये। इससे यह लाभ होगा कि मक्खियाँ उस पर न बैठ सकेंगी और न गन्दगी फैला सकेंगी।

हमें पाखाने की सफाई पर स्वय ध्यान रखना चाहिए और यदि हो सके तो स्वय साफ करना चाहिए। जो मल हमारे शरीर से निकलता है उसे दूर फेंकते न हिचकना चाहिए। हो सके तो उसे

गड्ढा खोदकर दबा देना चाहिये । खुले स्थान में तो स्वयं गड्ढा खोदकर उसे दबाना चाहिये ।

हम बहुधा जहां-तहां पेशाब करके हवा को खराब कर देते हैं । इस बुरी आदत का परित्याग कर देना चाहिये । यदि इसके लिए उचित प्रबन्ध न हो सके तो हमें घर से दूर सूखी मिट्टी डाल देनी चाहिये ।

मल को अधिक गहराई में नहीं गाड़ना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से उस पर सूर्य की किरणें नहीं पहुंच पायेंगी और इसके अलावा वह जमीन के नीचे बहने वाले पानी को भी गन्दा कर देगा ।

निवास-स्थान या उसके इर्द-गिर्द थूकने की आदत भी बहुत खराब है । राजयक्ष्मा रोग से ग्रसित मनुष्य के थूक से जो कीड़े उत्पन्न होते हैं, वे बहुत ही भयानक होते हैं । जिनसे कीड़े हवा के द्वारा दूसरे मनुष्य के शरीर में चले जाते हैं और उसे भी रोगी बना देते हैं । थूकने के लिए घर में एक खास बर्तन रखना चाहिये । घर के बाहर सड़कों पर, सूखी जमीन पर थूकना चाहिये ताकि कोई हानि न हो । डाक्टर की राय है कि राजयक्ष्मा के रोगी को पीकदान में जहर डालकर थूकना चाहिये, क्योंकि यदि वह सूखी जमीन पर भी थूकता है तो कीड़े धूल के सहारे हवा में मिल जायेंगे । जहां-तहां थूकने की आदत बहुत गन्दी और हानिकारक है ।

अक्सर लोग सड़े खाद्य-पदार्थ या ऐसे ही अन्य सामग्री को जहां चाहते हैं, फेंक देते हैं जो सड़कर हवा को दूषित कर देती है । यदि ऐसी चीजें जमीन में गाड़ दी जायें तो हवा दूषित होने से बच जाय और साथ ही जमीन को कुछ खाद भी प्राप्त हो जाय । वास्तव में कोई भी सड़ी-गली चीज खुली हवा में न छोड़नी चाहिए । ऐसा

करने के लिए हमें अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं है । केवल थोड़ी-सी सावधानी से यह काम हो सकता है ।

अब इस बात को हम लोग समझ गए कि स्वयं हम लोगों की कुछ आदतें हवा को दूषित कर देती हैं । अब इसको स्वच्छ रखने के लिए क्या सावधानी करनी चाहिए । हम पीछे लिख चुके हैं कि साँस नाक से लेनी चाहिए मुँह से नहीं । उचित रीति से साँस लेना बहुत कम लोग जानते हैं । बहुतेरे मुँह से साँस लेते हैं जो हानि कारक है । साँस लेने में यदि बहुत ठंडी हवा अन्दर प्रवेश करती है तो हमें ठंड लग जाती है और अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं । इसके अतिरिक्त मुँह से साँस लेने से हवा में मिले मिट्टी के कण फेफड़ों में पहुँच कर बहुत हानि पहुँचाते हैं । जैसे कि नवम्बर मास में लंदन में जो धुआँ बड़ी-बड़ी चिमनियों से निकलता है वह कुहरे में मिलकर पीला पदार्थ पैदा करता है । इसमें कालिख मिला रहता है जो वहाँ के मुँह से साँस लेने वाले आदमियों के थूक में देखा जाता है । जो स्त्रियाँ नाक से साँस नहीं लेतीं इससे बचने के लिए मुँह पर नकाब डाले रहती हैं जो उनकी रक्षा करता है । यदि नकाब को सावधानी से देखा जाय तो उस पर छोटे-छोटे कोयले के कण लगे हुए मिलेंगे । हमारे नाक के अन्दर एक ईश्वरीय पर्दे हैं जो उन्हें फेफड़ों तक जाने से रोक देते हैं । अतः हमें सर्वदा नाक से साँस लेनी चाहिए । यह कोई कठिन कार्य नहीं है अगर हम लोग अपने मुँह को सिवा बात-चीत करने वक्त छोड़ सर्वदा बन्द रखें । जिनकी आदत मुँह खोलकर सोने की है उन्हें अपने मुँह पर पट्टी लगाकर सोना चाहिए ताकि उन्हें नाक से साँस लेना पड़े । उन्हें सुबह-शाम खुली हवा में बीस-बीस लम्बी साँस लेनी चाहिए । सभी आदमी इस साधारण व्यायाम को कर सकते हैं और थोड़े ही दिन बाद यह देख सकते हैं कि उनका सीना कितना चौड़ा और मजबूत हो जाता है । दो ही महीने बाद इस बात का अनुभव होगा कि

उनका सीना पहले की अपेक्षा कुछ अधिक चौड़ा हो गया है। सैंडो की कसरत का यही रहस्य है।

हमें सदा स्वच्छ हवा में साँस लेने की आदत डालनी चाहिए। हम लोग बहुधा दिन-रात किसी बन्द कमरे में पड़े रहते हैं। हमारे अन्दर यह एक बुरी आदत है। जहाँ तक सम्भव हो हमें खुली हवा में रहना चाहिए तथा बारादरी में सोना चाहिए। हवा हमारी दिन भर की खुराक है, अतः हमें ठंड से नहीं डरना चाहिए। उन लोगों को ठंड लगने की सम्भावना है जिनकी आदत बन्द कमरे में सोने की है, लेकिन अभ्यस्त हो जाने पर उनकी यह बुरी आदत भी जाती रहेगी।

यूरोप में आजकल राजयक्ष्मा के रोगियों के लिए इस ढंग का कमरा बनाया गया है कि उसमें सदा स्वच्छ हवा प्रवेश करती रहे। हम लोग जानते हैं कि हिन्दुस्तान में कभी-कभी भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसका मुख्य कारण दूषित हवा में साँस लेना ही है। इस बात पर विश्वास रखना चाहिए कि कोमल-से-कोमल शरीर वाला मनुष्य भी ताजी और ठंडी हवा में साँस लेने का अभ्यस्त हो सकता है। यदि हम सदा स्वच्छ हवा में साँस लेने की आदत डालें, तो अपने को बहुतेरे भयंकर रोगों से बचा सकते हैं।

खुले मुँह सोना भी उतना ही आवश्यक है जितनी खुली हवा में साँस लेना। हम लोगों में से बहुतों की आदत मुँह ढँककर सोने की है। ऐसा करने से स्वयं उनके अन्दर की निकली हुई दूषित हवा पुनः उनके साँस से अन्दर प्रवेश करती है। यह बुरी आदत है और साँस के सिद्धान्त के विरुद्ध है।

यदि हमें जुकाम हुआ हो, तो सर को ढँक सकते हैं, लेकिन नाक को सदैव खुला ही रखना चाहिए। हवा और रोशनी में घनिष्ठ संबंध है। दोनों की समान आवश्यकता है। इसी कारण अँधेरे स्थान को नरक कहते हैं। जहाँ रोशनी नहीं जाती वहाँ की वायु ग्रुद्ध नहीं रह सकती। यदि हम लोग किसी बन्द स्थान में प्रवेश

४—जल

हवा के बाद जल का नम्बर आता है । जीवन के बाद हवा की भाँति जल की भी अत्यन्त आवश्यकता है । हवा के बिना मनुष्य चन्द मिनटो से अधिक जिन्दा नही रह सकता, लेकिन जल के बिना कुछ दिनो तक जिन्दा रह सकता है । भोजन के बिना मनुष्य जल के सहारे बहुत दिन जीवित रह सकता है । हमारे खाद्य-पदार्थों में सत्तर प्रतिशत जल का अंश है और इसी अनुपात से हमारे शरीर में भी जल का अंश है ।

हमारे लिये जल एक अत्यन्त आवश्यक वस्तु है, फिर भी उसकी रक्षा हम कम करते है । हवा और जल के संबंध में असावधानी रखने ही से हमें कितने भयंकर रोग आ घेरते है । गन्दा जल पीने से बहुधा पथरी का रोग होता है ।

जल दो तरह से गँदला हो सकता है । या तो उसके निकलने का स्थान गन्दा हो या हम लोग उसे गन्दा करें । यदि जल गन्दी जगह से निकलता हो तो हमें नही पीना चाहिए । प्राय. हम लोग ऐसा जल पीते है । लेकिन जो जल हम स्वयं गन्दा करते है उसे पीते हम जरा भी नही हिचकते । नदी का जल सबसे निर्मल समझा जाता है । यद्यपि हम लोग उसमें कूडा-करकट फेंकते है और गन्दे कपडे धोते है । हमें नियम बना लेना चाहिए कि हम उस जल को भी न पीयें जिनमें लोग स्नान करते है. नदी के ऊपरी भाग का जल पीने के लिए ही रख छोडना चाहिए, और नीचे का भाग कपडा धोने और स्नान करने के लिए । जहाँ ऐसा प्रबन्ध न हो वहाँ पीने का जल हमें बालू खोदकर लेना चाहिए । यह जल बहुत निर्मल होता है, क्योंकि बालू जल को छानकर स्वच्छ कर देता है । कुएँ का जल बहुधा हानिकारक होता है । कुआँ जब तक चारो तरफ से सुरक्षित न हो उसका जल नही पीना चाहिए ।

है । कुछ लोगो का धारणा है कि हल्का जल की अपेक्षा भारी जल, नमक का मिश्रण होने के कारण लाभदायक होता है । लेकिन अनुभव से यह पता लगा है कि भारी जल पाचनशक्ति को बढ़ाता है । वर्षा का जल हल्के जल से भी अच्छा होता है । अत पीने के लिए सर्वोत्तम है । भारी जल यदि डेढ़ घण्टे तक उबाला जाय तो यह भी हल्का हो जाता है और तब इसे छान कर पी सकते है ।

यह प्रश्न हमेशा पूछा जाता है कि मनुष्य को कब और कितना जल पीना चाहिए ? इसका उचित उत्तर यही है कि जब प्यास लगे तब जल पीना चाहिए । भोजन के मध्य में भी जल पिया जा सकता है या भोजन के बाद शीघ्र ही पीना चाहिए । जल के सहारे भोजन नहीं निगलना चाहिए । यदि भोजन स्वय नीचे नही उतरता हो, तो यह समझना चाहिये कि या तो वह अच्छी तरह मुँह से कुचला नहीं गया है, या पेट इसे चाहता ही नहीं है ।

साधारणत जल पीने की आवश्यकता नही है । जैसे कि पहले बतलाया जा चुका है कि हमारे भोजन में जल का अश अधिक है, और भोजन पकाते समय भी उसमें जल मिलते है । तब हमें प्यास क्यो लगती है ? उन लोगो को जल की आवश्यकता नहीं पड़ती जिनके भोजन में ससाला और प्याज न मिला हो, जिन्हें अधिक प्यास लगती है वे अवश्य किसी-न-किसी रोग के शिकार है ।

दूसरे को जल पीते देख प्यास न होने पर भी हमारी इच्छा जल पीने की होती है । इसी बुनियाद पर हम उस जल को पीते भी है, क्योंकि दूसरो को पीते देखते है । इसके लिये वायु के परिच्छेद में पहले ही बताया जा चुका ह । हमारे खून में स्वय इतनी शक्ति है जो बहुतेरे विषो को नाश कर देती है । लेकिन उस खून की शुद्धि की उसी प्रकार आवश्यकता पड़ती है जिस प्रकार एक बार

है । कुछ लोगो का धारणा है कि हल्का जल की अपेक्षा भारी जल, नमक का मिश्रण होने के कारण लाभदायक होता है । लेकिन अनुभव से यह पता लगा है कि भारी जल पाचनशक्ति को बढ़ाता है । वर्षा का जल हल्के जल से भी अच्छा होता है । अत: पीने के लिए सर्वोत्तम है । भारी जल यदि डेढ़ घण्टे तक उबाला जाय तो वह भी हल्का हो जाता है और तब इसे छान कर पी सकते हैं ।

यह प्रश्न हमेशा पूछा जाता है कि मनुष्य को कब और कितना जल पीना चाहिए ? इसका उचित उत्तर यही है कि जब प्यास लगे तब जल पीना चाहिए । भोजन के मध्य में भी जल पिया जा सकता है या भोजन के बाद शीघ्र ही पीना चाहिए । जल के सहारे भोजन नहीं निगलना चाहिए । यदि भोजन स्वय नीचे नहीं उतरता हो, तो यह समझना चाहिये कि या तो वह अच्छी तरह मुँह से कुचला नहीं गया है, या पेट इसे चाहता ही नहीं है ।

साधारणत जल पीने की आवश्यकता नहीं है । जैसे कि पहले बतलाया जा चुका है कि हमारे भोजन में जल का अंश अधिक है; और भोजन पकाते समय भी उसमें जल मिलते है । तब हमें प्यास क्यों लगती है ? उन लोगो को जल की आवश्यकता नहीं पड़ती जिनके भोजन में मसाला और प्याज न मिला हो, जिन्हें अधिक प्यास लगती है, वे अवश्य किसी-न-किसी रोग के शिकार है ।

दूसरे को जल पीते देख प्यास न होने पर भी हमारी इच्छा जल पीने की होती है । इसी बुनियाद पर हम उस जल को पीते भी है, क्योंकि दूसरो को पीते देखते है । इसके लिये वायु के परिच्छेद में पहले ही बताया जा चुका है । हमारे खून में स्वय इतनी शक्ति है जो बहुतेरे विषो को नाश कर देती है । लेकिन उस खून की शुद्धि की उसी प्रकार आवश्यकता पड़ती है जिस प्रकार एक बार

प्रयोग करने के बाद तलवार को साफ करने की आवश्यकता होती है। यदि हम लोग गंदले जल को बराबर पीते रहें तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हम लोगों का खून अन्त में विषैला हो जाय।

—o—

५–भोजन

भोजन के विषय में नियम निर्धारित करना कठिन ही नहीं, वरन् एक जटिल समस्या है। इसमें यह मतभेद है कि कब, कितना और किस प्रकार भोजन करना चाहिए। इसमें मानव प्रकृति इस संबंध में इतनी भिन्नता रखती है कि पदार्थ एक के लिये गुणकारी और दूसरे के लिये हानिकारक सिद्ध होता है।

यद्यपि यह कहना कठिन है कि किस प्रकार का भोजन ग्राह्य है, फिर भी इस संबंध में कुछ विचार करना अति आवश्यक है, क्योंकि बिना भोजन किये मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। भोजन प्राप्ति के लिये हमें तरह तरह की कठिनाइयाँ एवं दुखों का सामना करना पड़ता है, लेकिन यह मानी हुई बात है कि ९९ प्रतिशत मनुष्य केवल स्वाद के लिए खाते हैं और वे वैसे स्वादयुक्त भोजन के अन्तिम परिणाम को नहीं सोचते। कुछ लोग पाचनशक्ति को बढ़ाने के लिए औषधियों का भी सेवन करते हैं ताकि वे अधिक मात्रा में खा सकें। कुछ लोग तो इतना भोजन कर लेते हैं कि उल्टी तक करने लग जाते हैं और फिर भी उसी प्रकार का भोजन करते हैं। कुछ इतना अधिक खा लेते हैं कि दो-तीन दिन तक फिर भोजन नहीं करते। कभी-कभी यह सुनने में आता है कि कितनों की मृत्यु अधिक भोजन करने से हुई है। मैं अपने निजी अनुभव की बात कहता हूँ कि जब कभी मुझे अपने पिछले दिनों की बात याद आती है, तो मैं हँसता हूँ। उन दिनों में सुबह चाय पीता था, दो-तीन

घण्टे बाद जलपान और एक बजे दिन को भोजन करता था। फिर तीन बजे चाय पीता था और ७-८ बजे के बीच रात को भोजन करता था। उन दिनों मेरी अवस्था दयनीय थी। मैं काफी मोटा था, फिर भी औषधियों की बोतलें पास ही रहती थीं। अधिक खाने के लिये मैं सदा पचाने वाली औषधि का सेवन करता था। लेकिन उन दिनों आज के लिहाज भी काम करने की शक्ति और साहस नहीं था। यद्यपि वे मेरे युवाकाल के दिन थे। ऐसा जीवन सचमुच दयनीय ही नहीं, बल्कि विचार किया जाय तो पापमय तथा घृणित है।

मनुष्य केवल भोजन करने के लिए नहीं पैदा हुआ है और न उसे केवल भोजन के लिये ही जीवित रहना चाहिए। उसका प्रधान कर्तव्य तो अपने बनाने वाले (ईश्वर) को पहचानना तथा उसकी सेवा करना है। लेकिन चूँकि ये काम इस शरीर ही से किये जा सकते हैं तथा करना आवश्यक है अतः उसे कायम रखने के लिए भोजन करना आवश्यक है। पहलवान लोग भी इसे स्वीकार करते हैं कि हमें उतना ही भोजन करना चाहिए जितना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद हो।

अब पशु और पक्षियों का जीवन देखिए। वे कभी स्वाद के लिए नहीं खाते और न इतना अधिक भोजन ही करते हैं कि उनका पेट फटने लगे। वे केवल अपनी भूख मिटाने भर ही खाते हैं। जो कुछ प्रकृति देवी उन्हें देती है, वे वही खाते हैं। वे अपना भोजन पकाते नहीं हैं। क्या यह सच है कि केवल मनुष्य ही रस की उपासना करे? क्या यह सच है कि ऐसा कर केवल मनुष्य ही सदा रोगों का शिकार बने? वे पशु-पक्षी जो स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण करते हैं कभी भूख से नहीं मरते। उनके लिए स्वादिष्ट तथा रूखा-सूखा भोजन में कोई अन्तर नहीं है। जीव जो दिन में कई बार भोजन करते हैं और वे जीव जिन्हें एक बार कठिनता से भोजन मिलता है केवल मानव

समाज ही में मिलते है। फिर भी हम मनुष्य अपने जीवन को उत्तम समझते हैं। वास्तव में वे मनुष्य जो अपना समय केवल पेट-पूजा ही में गँवाते हैं, उन पशु-पक्षियों से कहीं बदतर है।

ध्यानपूर्वक विचार करने से हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि सभी तरह के पाप, झूठ बोलना, कमाना, चोरी करना इत्यादि सब पेटदेव की भेंट ही के लिए किए जाते है। केवल वे ही मनुष्य अपनी इन्द्रियों को वश में कर सकते है, जो अपनी जिह्वा को स्वादिष्ट भोजन से वञ्चित रखते हैं। यदि हम लोग झूठ बोलें, चोरी करें, ठगी करें तो समाज की दृष्टि में घृणित समझे जाते हैं, लेकिन जो सर्वदा स्वादिष्ट भोजन के पीछे पड़े रहते है, उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देता। पेटदेव के लिए आज तक जो भी घृणित कार्य किये जा रहे हैं, उनकी ओर कोई ध्यान नहीं देता। सभी सभ्य समाज एक झूठे का बहिष्कार कर देगा, लेकिन उसका नहीं जो अपना जीवन भोजन करने ही के लिए मान बैठा है तथा जो हद से ज्यादा भोजन करता है। चूँकि हम सभी पेट-देव के ऐसे ही उपासक है, अत इसे कोई पाप नहीं समझते। जैसे एक डकैत जो डकैतों के गाँव में बसा है कभी डकैत नहीं समझा जाता। ब्याह या दूसरे किसी त्योहार के अवसर पर अच्छा और स्वादिष्ट भोजन तैयार करना हम अपना मुख्य धर्म समझते है यहाँ तक कि श्राद्ध-कर्मों में भी ऐसा करने नहीं सकोच करते। ऐसे मौके पर यदि कोई मेहमान आ जाता है, तो उसको मिठाइयों की भेंट करते है। यदि समय-समय पर हम अपने सम्बन्धियों को निमन्त्रित नहीं करते है, या उनके यहाँ दिये गये भोज में सम्मिलित नहीं होते है तो हम उनकी नजरों में गिर जाते हैं और यदि निमन्त्रित कर हम उनके आगे स्वादयुक्त भोजन नहीं रखते तो कजूस समझे जाते हैं। यह प्रायः ऐसी धारणा करते है कि छुट्टी के दिन अवश्य स्वादिष्ट भोजन बनना चाहिये। वास्तव में यह एक बड़ा पाप है, इसे करने

में हम अपनी बुद्धिमत्ता समझते है । हम अपने को ऐसी भीषण परिस्थिति मे कैसे बचा सकते है । कम-से-कम प्रत्येक मनुष्य को स्वास्थ्य-सुधार की दृष्टि से इसके ऊपर विचार करना परमावश्यक है।

इस विषय में अब हम लोग दूसरे ढग से विचार करें । संसार में हम देखते है कि प्रकृति देवी ने मनुष्य, पशु-पक्षी और कीडे-मकोडे सभी जीवो के लिए बहुतायत से खाद्य-पदार्थ पैदा किया है। यह प्रकृति का अनादि नियम है कि उसके राज्य में काम नियमबद्ध होते है । न तो वह कभी सोती है न अपने नियम से विचलित होती है और न उसमें आलस्य है । उसके सभी काम छोटे या बड़े, नियमानुसार होते रहते है । यदि हम लोग अपने जीवन को प्रकृति के नियमानुसार बनावें तो हमें अनुभव होगा कि इस ससार में भूख से पीडित होकर अधिक लोग नही मरते । चूकि प्रकृति सभी जीवो के लिये काफी भोजन उत्पन्न करती है, इसलिये यदि हम अपने हिस्से से अधिक भोजन करते है तो ऐसा कर दूसरो को भोजन से वञ्चित करते है । क्या यह सत्य नही कि बादशाह एव धनिको के भोजनालय में उनकी आवश्यकता से कही अधिक भोजन तैयार किया जाता है, और ऐसा कर बहुतेरे गरीबो का भोजन छीन लिया जाता है । अब यदि गरीब भूखो मरते है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? इसी प्रकार हम लोग भी अधिक भोजन करके दूसरो का भाग छीनते है एव भोजन भी स्वादिष्ट ही करते है । ऐसी अवस्था में कोई कारण नही कि हमारा स्वास्थ्य खराब न हो ।

इसके पहले कि हम लोग इस बात का निर्णय करें कि किस किस्म का भोजन हमारा आदर्श भोजन हो सकता है, हमें यह विचार अनुकूल है और किस प्रकार का प्रतिकूल । 'भोजन' शब्द के अन्तर्गत वे सभी पदार्थ है जो मुँह में लाये जाते है, जैसे शराब, भग, अफीम,

तम्बाकू, चाय, कहवा, कोकीन, मसाले, चटनी इत्यादि । कुछ निजी एव कुछ दूसरो के अनुभव से मेरा विश्वास है कि ये सभी पदार्थ हानिकारक है ।

शराब, भग, अफीम दुनिया के हर एक धर्म मे बहिष्कृत हो गये है। यद्यपि उनसे परहेज करने वालो की सख्या अभी कम है। शराब ने तो कितने घरो का नाश कर डाला है । शराबी की अक्ल मारी जाती है, यहाँ तक कि वह स्त्री और कन्या मे भी भेद नहीं कर पाता । उसका जीवन भारस्वरूप हो जाता है । शराबी बहुधा मोरियों में गिरे पाये जाते है । बुद्धिमान से बुद्धिमान आदमी शराब के नशे में बेहोश हो जाता है। उसका दिमाग कमजोर हो जाता है और वह कोई काम नहीं कर सकता । कुछ लोगो का कहना है कि दवा के तौर पर शराब पीना हानिकारक नहीं है लेकिन यूरोप के डाक्टर लोग भी अपने इस ख्याल को छोडने लगे है । बहुतो का कहना है कि जब शराब दवा के रूप मे इस्तेमाल की जाती है तो उसको ऐसे भी इस्तेमाल कर सकते है । लेकिन मै कहता हूँ कि बहुतेरे विषो का प्रयोग औषधि के रूप मे किया जाता है तो क्या हम उन विष को अपना भोजन समझ सकते है । शराब कुछ रोगो की औषधि हो सकती है । कोई भी बुद्धिमान मनुष्य किसी भी हालत में इसे ग्रहण करने को तैयार नहीं होगा । इससे समाज के लाखों और करोडो व्यक्तियो का नाश हुआ है । इस पदार्थ का एकदम त्याग देना अच्छा है । भले ही हम लोगो का यह नश्वर शरीर शराब की औषधि के बिना नष्ट हो जाय । सौभाग्यवश हिन्दुस्तान में अब भी ऐसे स्त्री-पुरुष बहुत है जो डाक्टर की सम्मति के बावजूद इसे छू भी नहीं सकते चाहे उनके जीवन का अन्त हो क्यो न हो जाय ।

अफीम भी शराब से कम हानिकारक नहीं है । यह सर्वथा त्याज्य

है। कौन नहीं जानता कि चीन जैसे शक्तिशाली राष्ट्र ने अफीम के प्रभाव में अपना सर्वस्व नष्ट कर दिया था और अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा नहीं कर सकता था। भारत के बहुत बड़े-बड़े जागीरदारों ने भी इसके वश में पड़कर अपना सर्वनाश कर डाला है।

तम्बाकू ने भी लोगों के ऊपर इस प्रकार अपना जादू फैला रखा है कि उसके त्याग करने में युग लग जायेंगे। क्या युवा क्या बुढ़ा, क्या बालक सभी इसके शिकार बन गये हैं। भले-से भले आदमी इससे परहेज नहीं करते। इसका प्रयोग सार्वजनिक हो गया है, और प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है। हम लोगों में से बहुत कम व्यक्ति सिगरेट कम्पनियों की चालों को जानते हैं। कम्पनियाँ अफीम या कुछ गन्धयुक्त नशीली वस्तुएँ इसमें मिलाती हैं जिसकी वजह से उन्हें पीने का चस्का बढ़ता जाता है, और उसके चंगुल से छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता है। वे लाखों पौण्ड उसके विज्ञापन में खर्च कर देती हैं। वे अपनी इस नीति को कार्यान्वित करने के लिये अपना निजी प्रेस, सिनेमा और लारीज का प्रबन्ध किये हुए हैं। यहाँ तक कि अपना उल्लू सीधा करने के लिए रुपये को पानी की तरह बहा देते हैं। स्त्रियाँ भी अब तम्बाकू पीने लग गयी हैं। आदमी का यह एक बड़ा सहायक है, इसे सिद्ध करने के लिये अनेक काव्य भी बन गये हैं। तम्बाकू की लत की अनेक बुराइयाँ हैं। पीने वाले उसके ऐसे गुलाम हो गये हैं कि वे उससे मुक्त होने की चेष्टा तक नहीं करते, यहाँ तक कि वे अपरिचितों के घर में भी आग माँगते जरा नहीं हिचकते। यह साधारण अनुभव की बात है कि इसके पीने वाले कितने ही दुष्कर्मों में पड़ जाते हैं। छोटे-छोटे लड़के अपने माँ-बाप के पैसे चुराने लगते हैं। यहाँ तक कि कितने कैदी सिगरेट चुरा लेते हैं, और उसे सावधानी से छिपा कर रखते हैं। इसके पीने वाले बिना भोजन रह जायेंगे, लेकिन इसे

पिये बिना नहीं रह सकते । सुना गया है कि कितनी बार अनेक सिपाही युद्ध-क्षेत्र में सिगरेट के बिना अपनी युद्ध-शक्ति तक खो बैठे हैं ।

रूस देश के काउन्ट-टालस्टाय की कही हुई एक कथा है कि किसी कारणवश एक मनुष्य ने अपनी स्त्री का वध करना चाहा । वह कटार खींचकर मारने को तैयार ही था कि उसका विचार बदल गया और उसने कटार रख दी । तब सिगरेट पीने के कारण उसकी अक्ल मन्द पड़ गयी और वह फिर अपनी स्त्री को मारने के लिये तैयार हो गया और उसे मार ही डाला । टालस्टाय की धारणा है कि सिगरेट के विष ने ही उसके विचार को फिर से विषैला बना दिया जिससे उसने स्त्री का बध कर दिया अतः तम्बाकू कहीं शराब से भी बढ़ कर विषैला है । इसके अतिरिक्त इसे पीने में खर्च भी बहुत पड़ता है । मुझे स्वयं एक ऐसे व्यक्ति विशेष से भेंट हुई, जिनको ७५० रु० माहवार से भी अधिक सिगरेट में खर्च करना पड़ता है ।

तम्बाकू पीने से पाचनशक्ति मन्द हो जाती है । इसके पीने वालों को भूख नहीं लगती बल्कि भूख बढ़ाने के लिए उन्हें मसाला और बघार का प्रयोग करना पड़ता है । उनका दम फूलने लगता है और कभी-कभी उनके चेहरे पर झुर्रियां पड़ जाती हैं । दांत और मसूड़ों का रंग काला पड़ जाता है इसके कारण कितने हो तो बीमार पड़ जाते हैं । तम्बाकू का भी धुआं हवा में मिलकर जन-साधारण का भी स्वास्थ्य खराब कर देता है ।

मेरी समझ में नहीं आता कि जो शराब पीना घृणित समझते हैं, वे तम्बाकू क्यों पीते हैं । शायद तम्बाकू का जहर सूक्ष्म है इसी से इसका प्रयोग करते हैं । अस्तु, जो हो मुझे यह कहने में जरा भी संकोच नहीं कि जो तम्बाकू का बिलकुल परित्याग नहीं करेगा, वह कभी भी स्वस्थ नहीं हो सकता ।

शराब जैसी मादक वस्तुओं का सेवन केवल शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का ही नाश नहीं करता, बल्कि चरित्र पर भी धब्बा लगाता है। उसे अपने को सँभालने की शक्ति नहीं रह जाती। हमारे यहाँ जब कोई मेहमान चला आता है, उसके सत्कार में भी चाय और कहवा भेंट करते हैं। चायपान एक साधारण और प्रचलित भोज हो गया है। लार्ड कर्जन के राजकाल में भारत में चाय की आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। अब तो करीब-करीब प्रत्येक घर में इसका प्रयोग प्रति दिन दोनों समय होने लगा है। समय ने इस तरह पलटा खाया है कि रोग-ग्रसित मनुष्य भी चाय और कहवे का प्रयोग पोषक समझकर करने लगे हैं।

यह बतला देना उचित है कि चाय, काफी, कोकीन ये सभी वस्तुएँ हानिप्रद है, यद्यपि मुझे मालूम है कि मेरा इस बात का समर्थन बहुत कम लोग करेंगे। इन चीजों में एक प्रकार का विष होता है। चाय और कहवे में यदि दूध और खाँड न मिलायी जाय तो इसमें कोई भी पोषक पदार्थ न रह जायगा। बार-बार के अनुभव से यह मान लिया गया है कि इन वस्तुओं में कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जो खून को बढा सके। कुछ दिन पहले इसका प्रयोग हम लोग किसी विशेष अवसर पर किया करते थे, परन्तु आज यह एक सामान्य प्रयोग हो गया है।

सौभाग्यवश कोकीन की अधिक कीमत होने से साधारण व्यक्ति उसका इस्तेमाल नही कर पाते। फिर भी धनिको के घर में इसका प्रयोग होता रहता है। चाय, काफी एवं कोकीन ये सभी पाचन-शक्ति को मन्द करते है। ये कितने हानिकारक होते है, इस बात से सिद्ध हो जाता है कि जो इसे एक बार भी प्रयोग करता है, उसे इसके बिना नही रहा जाता। पहले मुझे स्वयं सुस्ती मालूम होती थी यदि मैं नियमित समय पर चाय नही पीता था। एक बार एक विशेष अवसर पर करीब चार सौ स्त्रियाँ और बच्चे इकट्ठे

देखें, तो शायद हम कभी फिर उनका उपभोग करने को नहीं तैयार होंगे। सचमुच यदि हम जाँच करें तो पता चलेगा कि हम लोगों के ९० प्रतिशत खाद्यपदार्थ इसी तरीके से तैयार किये जाते हैं। कहवा, चाय और कोकीन के बदले पीने के लिए एक दूसरी वस्तु इस तरीके से तैयार कर सकते हैं जिसे अच्छे-से-अच्छे पीने वाले चाय, कहवा और उसमें कुछ अन्तर नहीं पायेंगे ? एक सेर अच्छा गेहूँ एक कड़ाही में रख कर आग पर भूना जाय जब तक कि वह लाल न हो जाय। उसके बाद उसे खूब महीन पीस लिया जाय। एक चम्मच मैदे में खदखद खौलता हुआ पानी उसमें छोड़कर चन्द मिनट तक उसको आग पर रखा जाय। उसके बाद उसमें दूध और शक्कर मिलाकर उसका प्रयोग किया जाय। यह कहवे से कहीं सस्ता, स्वादिष्ट तथा लाभप्रद होता है। जो ऐसा चूर्ण बनाने के परिश्रम से बचना चाहते हों, उन्हें अहमदाबाद के सत्याग्रह आश्रम से इसे लेना चाहिये।

भोजन के ख्याल से मानव-समाज तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। सबसे बड़ा भाग वैष्णव (जो मांस नहीं खाता)। इस भाग में भारत के अलावा यूरोप, जापान और चीन के भी कुछ मनुष्य हैं। इनमें कुछ धर्म के भाव से मांस खाते हैं, और कुछ यदि मिल जाय तो शौक से खाते हैं। इनमें इटालियन, आयरिश, रूस के गरीब किसान और चीन के सब मनुष्य शामिल हैं। दूसरे भाग में वे लोग हैं जो मिश्रित भोजन खाते हैं। इंगलिस्तान के पुरुष, चीन जापान के धनी पुरुष, भारत के धनी मुसलमान और धनी हिन्दू जिन्हें मांस खाने में कोई धार्मिक अड़चन नहीं। परन्तु इस भाग में पहले भाग के बराबर मनुष्य नहीं हैं। तीसरे भाग में वे मनुष्य हैं जो केवल मांसाहारी हैं। ये ठंडे देश की असभ्य जातियाँ हैं। इनकी संख्या अधिक नहीं है। अब ये यूरोप की सभ्य जातियों के

समर्ग में आने से अपने भोजन के साथ शाक भी खाने लगे हैं। इस तरह मनुष्य तीन प्रकार का भोजन करता है, लेकिन हम लोगो का कर्तव्य है कि इसका विचार करें कि इन तीनो में सबसे अधिक स्वास्थ्यप्रद किस भाग का भोजन है।

मनुष्य की शारीरिक बनावट को देखकर यही प्रतीत होता है कि प्रकृति ने मनुष्य को शाकाहारी बनाया है। मनुष्य और फल-भक्षी जीवो में शारीरिक अवयवो में बहुत कम अन्तर है। उदाहरण के लिए बन्दर को लीजिये। वह मनुष्य के अङ्ग से बहुत मिलता जुलता है, और एक फलाहारी जीव है। उसके दाँत और पेट मनुष्य के दाँत और पेट जैसे होते है। मांसाहारी जीव, जैसे शेर, चीते वगैरह सर्वथा उससे भिन्न होते हैं। मनुष्य और तृण-भक्षी जीव, जैसे गाय वगैरह के भी कुछ अग मिलते-जुलते है लेकिन उनके जबड़े बड़े होते हैं तथा रग-रूप में भी कुछ भिन्नता होती है। इन सब बातो के आधार पर वैज्ञानिको का मत है कि मनुष्य का भोजन मांस नही और न केवल शाक ही है, बल्कि फल-फूल है।

वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि फलो के अन्दर वह सब तत्त्व पाये जाते हैं जो मनुष्य के लिए आवश्यक है। केले, सन्तरे, खजूर, अगूर, मेवे, बादाम, मूँगफली इत्यादि में अधिक मात्रा में पुष्टिकारक तत्त्व मौजूद हैं। उनकी यह भी राय है कि भोजन का पकाना नही चाहिए। धूप से पके हुए फल अत्यन्त लाभदायक होते हैं। पकाये हुए भोजन का पौष्टिक तत्त्व नष्ट हो जाता है। जो वस्तु बिना आग पर पकाये हम नही खा सकते, उसे प्रकृति ने हमारे लिए ही बनाया है।

यदि यह बात सत्य है तो हमें समझना चाहिए कि हम अपना बहुमूल्य समय भोजन पकाने में व्यर्थ नष्ट करते है। यदि हम लोग बिना पकाये हुए भोजन पर रह सकते है, तो हमारा समय, स्फूर्ति

और पैसे की बचत हो जाती है, और ये साधन सुधार के कार्यों में लगाये जा सकते हैं ।

कुछ लोग ऐसा कहेंगे कि बिना पकाये हुए भोजन पर जीवन-निर्वाह करने की आशा केवल मूर्खता है क्योंकि ऐसा आजन्म नहीं किया जा सकता । लेकिन इस समय हम इस विषय पर नहीं विचार कर रहे हैं कि सब लोग इस नियम के अनुसार चल सकते हैं या नहीं । हम केवल यह विचार कर रहे हैं कि हमें क्या करना चाहिये।

हम लोग केवल इस बात का तर्क कर रहे हैं कि कौन-सा पदार्थ हमारा आदर्श भोजन हो सकता है । ऐसा कर जब हम यह कहते हैं कि फल आदर्श भोजन है, तो हम लोग सर्वसाधारण से यह आशा नहीं करते कि वे केवल फल ही खाने लगेंगे । कहने का केवल यही अभिप्राय है कि यदि वे फल ही खायें तो यह उनका सबसे पुष्टिकारक एव आदर्श भोजन होगा । इगलैंड में बहुत से ऐसे आदमी मौजूद हैं जो केवल फलाहार करते हैं और अपने अनु-भव को अकित किये हुए हैं । वे ऐसे मनुष्य हैं जो धर्म के नाम पर नहीं, बल्कि स्वास्थ्य के लिये ऐसा करते हैं । जर्मनी के एक जुस्ट नामक डाक्टर ने इस विषय पर एक बहुत बडी पुस्तक लिखी है और उसमें अनेक दलीलो को पेश करते हुए फलाहार का महत्त्व दर्शाया है । उसने बहुत से रोगियो को फल तथा स्वच्छ वायु का सेवन कराकर आराम किया है । वह यहाँ तक कहता है कि प्रत्येक देश के मनुष्य अपने देश के फलो में अपने लिए पोषक पदार्थ पा सकते हैं । इस विषय में यदि मैं स्वयं अपना निजी अनुभव लिखू तो कोई अत्युक्ति न होगी । गत छ मास से मैं फल खा कर रहता आ रहा हूँ । यहाँ तक कि दूध और मक्खन का भी परित्याग कर दिया हूँ । मेरा मुख्य भोजन केला, चीनी, बादाम, खजूर, जैतून का तेल और कुछ खट्टे फल जैसे नीबू वगैरह है । मैं नहीं कह सकता

कि मेरा यह प्रयोग कहाँ तक सफल हुआ है, लेकिन केवल छ महीने का समय किसी मुख्य उद्देश्य पर पहुँचने के लिए बहुत कम है। इतना अवश्य है कि मैं छ महीनो के बीच बिलकुल नीरोग रहा हूँ जब कि दूसरे रोग ग्रसित थे। इस समय मेरी शारीरिक और मानसिक शक्ति पहले की अपेक्षा बढी हुई है। मै बडे-बडे बोझो का भार नही ले सकता, लेकिन मैं कडे परिश्रम को देर तक बिना थकावट के कर सकता हूँ। मै मानसिक काम भी अधिक उत्साह और तत्परता से कर सकता हूँ। मै बहुत रोगियो को अच्छे परिमाण के साथ फलाहार कराता हूँ। मै उन अनुभवो को अगले पृष्ठो में विस्तृत रूप से बतलाऊँगा। यहाँ इतना ही कह देना आवश्यक समझता हूँ कि यह मेरा निजी अनुभव है कि फल सब भोजनो में पुष्टिकारक एव स्वास्थ्यकारक है। मैं इस बात को पहले ही कह चुका हूँ कि मेरे कहने से सभी लोग फलाहार नही करने लगेंगे। हो सकता है कि पाठको में से एक भी न करे, लेकिन अपना कर्त्तव्य और धर्म समझकर इस विषय पर जो कुछ अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है, उसे लिख देना उचित समझता हूँ।

यदि कोई मनुष्य फलाहार करना चाहे तो उसे बहुत सावधानी से इसे आरम्भ करना चाहिए। पहले उसे इस किताब के सभी प्रकरणो को पढकर उसके मुख्य-मुख्य बातो को समझ लेना चाहिए। पाठको से मेरी यही प्रार्थना है कि वे अपना अन्तिम निर्णय शीघ्रता से न करें जब तक कि मेरी सब बातो को न पढ लें। फलाहार के बाद शाकाहार और इसी में दूध भी शामिल है। शाक उतना पोषक नही है जितना कि फल, क्योंकि शाक को आग पर पकाने से उसका पोषक अश नष्ट हो जाता है। लेकिन बिना आग पर पकाये हम उसे खा नही सकते। आगे चलकर यह विचार करेंगे कि कौन-सा शाक अधिक पोषक है।

गेहूँ सब अन्नो में प्रधान है। केवल गेहूँ पर मनुष्य अपना जीवन

व्यतीत कर सकता है, क्योंकि इसमें पोषक तत्व समान अंश में है। इससे कई प्रकार के भोजन बन सकते हैं जो सहज ही में पच जाते हैं। मक्का और बाजरा भी उसी श्रेणी के हैं और इनकी भी रोटियाँ बनती हैं, किन्तु ये गेहूँ से कुछ नीचे दर्जे के हैं। अब हम यह विचार करेंगे कि गेहूँ के बनाने का सबसे अच्छा तरीका कौन-सा है। कल का आटा जो बाजारों में बिकता है, बिल्कुल बेकार होता है और उसमें पोषक तत्व बिल्कुल नहीं रहता। एक अंग्रेज डाक्टर का कहना है कि एक कुत्ता जिसे केवल कल के आटे की रोटी खिलाई जाती थी, कमजोर हो कर मर गया और दूसरा कुत्ता जिसे दूसरा आटा खिलाया जाता था, स्वस्थ बना रहा। फिर भी स्वाद की दृष्टि से इसकी माँग अधिक है। इसकी रोटियाँ कड़ी और स्वादहीन होती हैं। कभी-कभी वे इतनी कड़ी हो जाती हैं कि हाथ से तोड़ना भी कठिन हो जाता है। सबसे अच्छा आटा वह है जो गेहूँ को कूट-छाँटकर चक्की में स्वयं पीसकर तैयार किया जाता है। इसका प्रयोग बिना छाने करना चाहिये। इसकी बनी रोटियाँ स्वादिष्ट और मुलायम होती हैं। पोषक होने के कारण यह देर तक ठहरती है। बाजार की रोटियाँ यद्यपि देखने में भली और आकर्षक मालूम होती हैं, लेकिन वे व्यर्थ और हानिकारक होती हैं। उनमें चर्बी चुपड़ी होने के कारण हिन्दू-मुसलमान दोनों के लिए समान रूप से आपत्तिजनक होती हैं। गेहूँ बनाने का दूसरा तरीका यह है कि गेहूँ को दल लिया जाय और उसमें दूध और खाँड मिलाकर पका लिया जाय। यह बहुत स्वादिष्ट तथा बल-वर्द्धक होता है।

चावल दाल, घी और दूध की तरह पुष्टकर नहीं होता। तरकारियाँ केवल स्वाद के लिए खाई जाती हैं। इनमें एक तत्व होता है जो खून को कुछ अंश में साफ करता है, लेकिन घास होने के कारण यह देर से पचता है। जो इनका अधिक व्यवहार करते हैं उन्हें प्रायः अपच हो जाती है। इसलिये हमें तरकारी उचित परिमाण में खानी चाहिए।

हरएक दाल पचने में भारी होती है। दाल में सिर्फ यही गुण है कि जो इसे अधिक खाता है उसे देर तक भूख नहीं लगती, बल्कि कभी-कभी बदहजमी हो जाती है। जो कठिन परिश्रम करते हैं, जो अमीरी का जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें इससे परहेज रखना चाहिये। इङ्गलैंड का एक बड़ा लेखक डा० हेग का कहना है कि दाल स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। और पेट में एक प्रकार की एसिड पैदा करती है जिसके कारण अनेक रोग उत्पन्न होकर शरीर को असमय वृद्ध बना देते हैं। इसके लिये दलीलें पेश करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन मैं भी उस अनुभव से सहमत हूँ जो दाल का परित्याग नहीं कर सकते, उन्हें इसे सावधानी से खाना चाहिए।

लगभग सारे हिन्दुस्तान में तरह-तरह के मसाले और बघार बहुतायत से प्रयोग किये जाते हैं जो किसी और देश में नहीं किये जाते। अफ्रीका के हब्शी लोग भी हमलोगों के मसालों से नफरत करते हैं। यदि अँग्रेज मसाले खाय तो उनके पेट की पाचन-क्रिया बिगड़ जाती है और उनके चेहरे पर दाग पड़ जाते हैं जिसे मैं अपने निजी अनुभव से जानता हूँ। सच बात तो यह है कि मसाला कोई खाने की सामग्री नहीं है, लेकिन चूंकि हम लोग बहुत दिनों से इसका प्रयोग करते चले आये हैं इसलिए उसका स्वाद हमारी इच्छा को बढ़ाता है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ कि स्वाद के लिए कोई भोजन करना हानिकारक है। तब फिर यह बात कैसे हुई कि मसाले का अधिक प्रयोग होना चाहिए। प्रायः लोग यही कहा करते हैं कि पाचन-शक्ति के लिए मिर्च धनिया का प्रयोग आवश्यक है, किन्तु इससे तो नकली भूख बढ़ती है जिसका प्रभाव शरीर पर अच्छा नहीं पड़ता। जो इन्हें अधिक खाते हैं उन्हें बहुधा दस्त की बीमारी होती है। मुझे मालूम है कि युवा आदमी अधिक

मसाला खाने से अपने युवाकाल ही में मर गया । अत. इसका परित्याग सर्वथा आवश्यक है ।

मसाले के विषय में जो कुछ कहा गया है वही नमक के विषय में भी कहा जा सकता है । कितने ही इस बात को सुनकर चौक पडेंगे, लेकिन यह एक अनुभव सिद्ध बात है । इगलैंड में एक स्कूल है जिसका यह मत है कि नमक मसाले से हानिकर है । जो शाक हम लोग खाते है उनमें आवश्यकतानुसार नमक का हिस्सा मौजूद है, अत ऊपर से नमक मिलाने की कोई आवश्यकता नहीं । आवश्यकता से अधिक नमक हमारे शरीर के पसीने द्वारा या और किसी दूसरे तरीके से बाहर निकल आता है । प्रकृति ने आवश्यकतानुसार सभी खाद्य पदार्थों में नमक का हिस्सा छोड रक्खा है । एक लेखक का यह कहना है कि नमक खून को विषैला बना देता है । वह यह भी कहता है कि जो लोग बिल्कुल नमक नही खाते उनका खून इतना स्वच्छ रहता है कि साँप के विष का भी प्रभाव उन पर कुछ नहीं पडता । हम नही कह सकते कि यह कहाँ तक सच है, लेकिन अपने निजी अनुभव से यह कह सकता हूँ कि दमा जैसे बहुत से रोग नमक छोड देने से शीघ्र आराम हो जाते है । दूसरी बात यह कि इसके छोड देने से किसी को कुछ हानि नही देखी गयी, बल्कि उन्हें कुछ लाभ ही होता है । मैंने स्वय दो वर्ष से नमक छोड दिया है, और उसका परिणाम मुझे जरा भी नही अखरता, बल्कि कुछ अश में मुझे लाभ ही हुआ है । अब मुझे पहले जैसा बार-बार पानी नही पीना पडता । मेरे नमक छोडने का कार बडा ही अद्भुत है । अपनी स्त्री के रोग के कारण मुझे ऐसा कर पडा और वह इसके बाद अधिक बीमार न पडी, बल्कि उसी अवस में रही । यह मेरा विश्वास है कि यदि रोगी ने स्वय इसे छ दिया होता, तो उसे पूरा लाभ अवश्य होता । जो नमक छो

उन्हें दाल और शाक भी छोड़ना पड़ेगा । यह एक बड़ा कठिन काम है । मुझे विश्वास है कि शाक और दाल नमक बिना हजम नहीं हो सकते । इसका यह मतलब नहीं कि नमक पाचन-शक्ति को बढ़ाता है, उससे केवल ऐसा होते प्रतीत होता है और उसका परिणाम बुरा होता है । यदि कोई आदमी नमक छोड़ दे, तो कुछ दिन तक उसे कुछ अड़चन मालूम होगी । लेकिन यदि वह अपने धैर्य को कायम रखेगा, तो थोड़े ही दिनों में उसे बहुत लाभ हो सकता है ।

मैं दूध को भी त्याज्य कहने का साहस करता हूँ । यह मैं अपने निजी अनुभव के आधार पर कहता हूँ जिसे यहाँ विस्तृत रूप से वर्णन करने की आवश्यकता नहीं समझता । दूध को सब लोग लाभकारी समझने के भ्रम में हैं । उनका विश्वास इतना अटल है कि उनके सामने इसे सर्वथा त्याज्य सिद्ध करना जरा कठिन है, जैसे कि मैं पहले कई बार कह चुका हूँ कि मेरे पाठक मेरी दलीलों को अक्षरशः मान लेंगे, ऐसा मेरा विश्वास नहीं है । मैं यह भी नहीं मानता कि यदि कोई तर्क द्वारा इसे मान भी ले, तो वह उसे कार्यरूप में परिणत करेगा । खैर । मुझे जो सत्य प्रतीत होता है उसे कह देना अपना कर्तव्य समझता हूँ, चाहे पाठक अपने ही सिद्धान्त को क्यों न मानें । डाक्टरों का मत है कि दूध में एक प्रकार की ज्वरोत्पादक शक्ति है । उन्होंने इसे सिद्ध भी किया है । बीमारी फैलाने वाले कीड़े जो हवा में रहते हैं शीघ्र ही दूध में प्रवेश कर जाते हैं और उसे विषैला बना देते हैं, अतः दूध को सर्वथा स्वच्छ रखना कठिन है । दक्षिण अफीका में दूध के उबालने, उसे रखने, उसके बर्तनों को साफ करने के विषय में कुछ सरकारी कानून बनाये गये हैं । जब इसके लिए इतनी सावधानी तथा परिश्रम की आवश्यकता है, तो हम कह सकते हैं कि यह वस्तु ग्रहण करने योग्य नहीं ।

नही है । सब लोग इसका विचार स्वय कर सकते है । दूध की बनी हुई चीजो की भी कोई आवश्यकता नही है । मट्ठे की जगह नीबू का रस और घी के जगह तेल का प्रयोग कर सकते है ।

मनुष्य के शरीर की बनावट को ध्यानपूर्वक देखने से पता चलता है कि मास मनुष्य का प्राकृतिक भोजन नही है । डा० हेग एव किंग्सफोर्ड लपर ने मास का जो बुरा प्रभाव पडता है उसे साफ साफ दिखला दिया है । वे इस बात को भली प्रकार समझा चुके है कि मास भी दाल की तरह हानि पहुँचाने वाली वस्तु है । इससे दाँत असमय जाते है और दमे की बीमारी हो जाती है । इससे मनुष्य का खून उत्तेजित होकर स्वभाव चिडचिडा हो जाता है । हम पहले ही कह आये है कि यह भी एक प्रकार का रोग है । बडे शर्म की बात है कि बहुत से विचारशील और बुद्धिमान शाकाहारी मनुष्य इसके गुण-अवगुण को जानते हुए भी मासाहारी बने हुए है । अन्त में हम इसी नतीजे पर पहुँचते है कि बहुत कम मनुष्य ऐसे है जो फलाहार पर जीवन बिताते है । फिर भी हम निसकोच कह सकते है कि गेहूँ और मीठा बादाम खाकर रहना बहुत आसान है ।

साराश यह कि फल पर जीवन व्यतीत करने वाले लोग बहुत कम है । फल, गेहूँ और जैतून के तेल पर रहना बहुत लाभप्रद है । फलो में केले का स्थान सर्वप्रथम ह । केला, सन्तरा, खजूर, अगूर और आलूचा भी अत्यन्त पुष्टिकर है, और रोटी के साथ खाये जा सकते है । जैतून के साथ रोटी स्वादहीन नही होती । ऐसे भोजन में अडचन कम है और पैसे भी कम खर्च होते है । इस भोजन में नमक, मिर्च, दूध और चीनी की आवश्यकता नही पडती । खाली चीनी खाना तो बहुत हानिकारक है । अधिक मिठाई खाने से दाँत खराब होते है और स्वास्थ्य पर भी इसका बुरा प्रभाव पडता है । अच्छा खाद्य पदार्थ—गेहूँ, बादाम, मूँगफली और आखरोट

से बनाया जा सकता है । इससे स्वास्थ्य भी सुधर सकता है ।
दूसरा विचारणीय प्रश्न यह है कि हमें दिन भर में कितना और कितनी बार खाना चाहिए । इस महत्वपूर्ण विषय का उल्लेख हम आगे चलकर करेंगे ।

६—भोजन की मर्यादा

भोजन के परिमाण के विषय में डाक्टरो की राय में भिन्नता पायी जाती है । एक डाक्टर का कहना है कि अपनी इच्छानुसार खूब खाना चाहिये । इसने गुणो के अनुसार भोजन की मात्रा भी बता दी है । दूसरे की यह राय है कि मजदूर और दिमागी काम करने वालो के भोजन का औसत और गुण अलग अलग होना चाहिए । तीसरे डाक्टर की राय है कि धनी और मजदूर दोनो को समान भोजन मिलना चाहिए । यह सभी स्वीकार करेंगे कि कमजोर मनुष्य बलवान की तरह नही खा सकता है । इसी तरह एक स्त्री एक पुरुष की अपेक्षा कम भोजन करती है और बच्चे तथा बूढ़े नौजवानो से कम खाते हैं । एक लेखक का यहाँ तक कहना है कि यदि हम लोग भोजन को इस तरह कुचलें कि वह अच्छी तरह लार में मिल जाय, तो हम ५ से १० तोले पर अपना गुजर कर सकते है । वह अपने अनुभवो के आधार पर यह कहता है और उसकी इस विषय की पुस्तको की हजारो प्रतियाँ बिक चुकी हैं । यह देखते हुए भोजन का वजन बनाना उचित प्रतीत नही होता है ।

अधिकाश डाक्टरों का कहना है कि ९९ प्रतिशत मनुष्य जरूरत से अधिक खाते हैं । यह प्रति दिन के अनुभव की बात है । यह डाक्टर के लिखे बिना भी जानी जा सकती है । कम भोजन करने

में स्वास्थ्य के हानि की बिल्कुल सम्भावना नहीं । जहाँ तक हो सके भोजन की मात्रा कम ही करनी चाहिए ।

जैसा ऊपर कहा जा चुका है भोजन को खूब कुचलने की आवश्यकता है । ऐसा करने से हमें थोडी खुराक से भी तत्व मिल सकता है जो अत्यन्त ही लाभप्रद है । अनुभवी लोगों का कहना है कि जो आदमी पच जाने योग्य भोजन करता है उसको अच्छी तरह चबाता है और आवश्यकता से अधिक नहीं खाता । उसका पाखाना कड़ा, चिकना, थोड़ा, काले रङ्ग का और दुर्गंध रहित होता है । जिसकी टट्टी इस प्रकार खुलासा न हो तो उसे समझ लेना चाहिए कि वह अधिक भोजन करता है और उसे अच्छी तरह कुचल कर नहीं खाता है । इस तरह मनुष्य की अपनी टट्टी से अधिक और कम खाने की बात मालूम हो सकती है । स्वप्न देखना, नींद का आना और जबान पर मैल जमा रहना अधिक भोजन करने की पहचान है और यदि रात में उसको बार-बार पेशाब करना पड़े, तो उसे समझना चाहिये कि उसने अधिक रसदार चीजें खा लिया है । ऐसा करने से प्रत्येक मनुष्य अपनी खुराक की उचित मात्रा पर पहुँच सकता है । बहुतों को खट्टी डकार आती है जो भोजन न पचने की पहचान है । अधिक खाने से बहुतों के पेट में वायु विकार पैदा हो जाता है । इसका मुख्य कारण यह है कि हम लोग अपने पेट को पाखाना बना लिए हैं, जिसे हर जगह लिए फिरते हैं । जब हम इन बातों पर विचार करते हैं तो अपने व्यक्तित्व पर हमें घृणा होती है । अगर हम लोग अधिक खाने के पाप से बचना चाहते हैं तो हमें प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि हम किसी दावत में भाग न लें । हमारे यहाँ जब कोई मेहमान आ जाय तो उन्हें स्वास्थ्य के नियमों को ध्यान में रखते हुए खिलाना चाहिये । हम लोग अपने मित्रों को केवल जल पीने के लिये या साथ में मिलकर दाँत साफ करने के लिए तो कभी निमन्त्रित नहीं करते । क्या भोजन करने का नियम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक नहीं है ? हम

लोग इतना पेटू हो गये है कि हमारी जिह्वा सदा स्वादिष्ट भोजन चाहती है, इसीलिए हम लोग अपने मेहमानों को स्वादिष्ट भोजन कराते है कि जब हम भी उनके यहाँ जायेंगे तो वे भी हमें वैसा ही भोजन करायेंगे । भोजन के एक घण्टे बाद यदि हम स्वच्छ शरीर वाले मित्र से अपने मुँह को सूँघने के लिये कहें और उसके वास्तविक विचार जाने, तो हमें अपना मुँह लज्जा से छिपाना पडेगा लेकिन कुछ मनुष्य ऐसे निर्लज्ज होते हैं कि खाने के बाद शीघ्र ही कोई चूर्ण खा लेते है ताकि वे फिर खा सकें । कभी-कभी तो वे जो कुछ खाये रहते है उसकी उल्टी भी कर देते है और फिर भी भोजन के लिये बैठ जाते हैं ।

चूँकि हम लोग अधिक भोजन करने के थोडे-बहुत अपराधी हैं, इसलिए हमारे लिए धार्मिक दृष्टि से कभी-कभी व्रत रखने के नियम बनाये गये हैं । सचमुच स्वास्थ्य के विचार से एक पक्ष में एक दिन उपवास करना जरूरी है । बहुत से धार्मिक हिन्दू वर्षाकाल में एक ही वक्त खाते है । यह स्वास्थ्य के नियम का ही पालन है, क्योकि जब वायु में अधिक भाप होता है और आसमान में बादल घिरे होते है तब हम लोगो की पाचन-शक्ति भी कुछ कम हो जाती है । अत भोजन की मात्रा उन दिनो में कुछ कम करनी चाहिये ।

अब हमें यह विचार करना है कि दिन में कितनी बार खाना चाहिये । हिन्दुस्तान के अधिकांश मनुष्य दो बार खाकर रहते हैं । जो कठिन परिश्रम करते है वे तीन बार खाते हैं, लेकिन अंग्रेजी औषधि द्वारा चार बार खाने का आविष्कार हुआ है । अब इगलैंड और अमेरिका में ऐसे समाज बने है जो केवल दो बार खाने का प्रचार करते हैं । उनका कहना है कि हमें सुबह जलपान करना चाहिये, क्योंकि हम लोगों की नींद ही इस कमी को पूरा कर देती है । सवेरे उठकर हमें काम में लग जाना चाहिये और तीन घण्टे काम करने के बाद खाना चाहिये । जो इस नियम पर चलते है वे

आवश्यक है, यहाँ तक कि उसे सूर्य, चन्द्रमा और तारों की चाल की भी जानकारी चाहिये। योग्य से योग्य आदमी किसानों से इस सम्बन्ध में हार जाते हैं। वह अपने आवश्यक कार्यों के विषय में काफी ज्ञान रखता है। वह तारों को देखकर रात को दिशा का ज्ञान कर लेता है। चिड़ियों तथा चौपायों के बारे में भी काफी अनुभव रखता है। जब एक खास किस्म की चिड़िया एकत्रित होकर चहकने लगती है तो वह समझ जाता है कि कब वर्षा होगी। यहाँ तक कि पृथ्वी और आकाश के विषय में भी वह ज्ञान रखता है। चूँकि उसे अपने बाल-बच्चों का पालन-पोषण करना पड़ता है, इसलिए वह धर्म सम्बन्धी बातों का भी ज्ञान रखता है। लम्बे चौड़े आसमान के नीचे रहने के कारण वह ईश्वर के अस्तित्व को आसानी से समझ सकता है।

सभी लोग किसान नहीं हो सकते और न इस विषय में लिखने के लिए यहाँ काफी स्थान ही है। लेकिन चूँकि वे प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं, इसलिये उनके विषय में कुछ कहना आवश्यक प्रतीत हुआ। यदि हम प्राकृतिक नियमों को भङ्ग करते हैं, तो अवश्य ही उसके कारण हमें स्वास्थ्य सम्बन्धी कुछ क्षति सहन करनी पड़ती है। किसान ही के जीवन से हमें यह शिक्षा मिलता है कि हमें दिन में कम-से-कम आठ घण्टा मानसिक और शारीरिक परिश्रम करना चाहिए। व्यवसायी और अन्य लोगों को अवश्य कुछ काम करना पड़ता है, लेकिन उनका काम भी केवल मानसिक होने के कारण व्यायाम नहीं कहा जा सकता है।

पाश्चात्य देशों में ऐसे लोगों के लिए क्रिकेट, फुटबाल या ऐसे ही छोटे-छोटे खेलों का प्रबन्ध किया गया है। मानसिक व्यायाम के लिये किताब इत्यादि पढ़ने का प्रबन्ध किया गया है। ऐसे खेल शारीरिक व्यायाम के लिए कुछ अंश में उपयुक्त हो सकते हैं। लेकिन इनमें मानसिक व्यायाम नहीं होता। इन खिलाड़ियों में से

इस प्रकार खोदकर बोने देने में कुछ भी आपत्ति न होगी । ऐसा करने से हमें भी प्रसन्नता होगी कि हमने किसी दूसरे की जमीन खोद-बोकर साफ किया । वे लोग जिन्हें व्यायाम करने का समय नहीं मिलता, या जो इसे पसन्द नहीं करते—टहलने का अभ्यास कर सकते हैं, क्योंकि उसके बाद यह भी एक अच्छा व्यायाम है । साधु और फकीर लोग बहुत स्वस्थ हुआ करते हैं । इसका कारण यही है कि वे लोग देश भर में पैदल भ्रमण करते हैं । थोरो जो अमेरिका का एक प्रसिद्ध विद्वान् और लेखक है, इसकी प्रशंसा करते हुए इससे होने वाले अनेक लाभों को लिखता है । उसका कहना है कि ऐसे मनुष्य का लेख, जो सदा घर में रहता है और कभी बाहर नहीं जाता वैसे ही कमजोर होता है जैसा कि उसका शरीर । अपने को ही संकेत करके वह कहता है कि मेरे सभी लेख उन्हीं दिनों लिखे जा सके जब कि मैं टहलने का खूब अभ्यास रखता था । वह टहलने में इतना अभ्यस्त था कि दिन में चार-पांच बार टहलना उसके लिए एक साधारण बात थी ।

व्यायाम के लिए हम लोगों की इच्छा इतनी प्रबल होनी चाहिए कि किसी भी अवस्था में हतोत्साह न हों । हम लोग इस बात को नहीं समझ पाते कि शारीरिक व्यायाम के बिना हमारा मानसिक कार्य भी अधूरा और नीरस रह जाता है । टहलने से शरीर के प्राय सभी अवयव हिलते डुलते हैं, जिससे शरीर में खून का दौरा ज्यादा हो जाता है, क्योंकि जब हम सैर करते हैं तो ताजी हवा हमारे फेफड़ों में प्रवेश करती है इसके अतिरिक्त हम प्राकृतिक दृश्य और उनकी सुन्दरता का दर्शन प्राप्त हो जाते हैं । शहर और गन्दी गलियों में टहलना व्यर्थ है । हमें मैदान या जंगल-झाड़ियों में टहलना चाहिए जहाँ कि हमें प्राकृतिक दृश्य देखने को मिल सकें । [illegible] टहलना, नहीं टहलने के बराबर है । [illegible]

है जिसके फलस्वरूप उनका स्वास्थ्य बिगड जाता है । उपरोक्त
बातो से अब पाठक समझ गये होगे कि स्वास्थ्य का सबंध कुछ
अश में पहिनावे से भी अवश्य है । पोशाक के विषय में हमें अपने
बडे बूढो का अनुकरण करना पडता है । पोशाक के मुख्य उद्देश्य
को हम लोग भूल गये है और उसे अपने देश, धर्म और जाति का
सूचक मानने लगे है । ऐसी हालत में खासकर स्वास्थ्य के लिहाज
से पोशाक के विषय में विचार करना कठिन प्रतीत होता है ।
लेकिन इस तरह के वाद-विवाद से हमें अधिकाश लाभ ही होता
है । कपडे, जूते और गहने की भी गणना पोशाक में की जाती है ।

पोशाक का मुख्य उद्देश्य क्या है ? इसे कम लोग जानते हैं ।
आदि काल में मनुष्य कपडा नही पहनते थे । चारो तरफ नगा
फिरा करते थे । वे अपने गुप्त भाग को ढँक लेते थे, शेष सारे
शरीर को खुला रखते थे जिससे उनकी त्वचा कठिन और बलिष्ठ
हो जाती थी तथा वे हवा और पानी को अच्छी तरह सहन कर
लेते थे । उन्हें कभी ठण्डक नही लगती थी । जैसा कि हवा के
प्रकरण में वर्णन किया गया है कि हम केवल नाक से हवा नही
लेते, बल्कि शरीर के रोम-छिद्रो द्वारा भी अपने अन्दर हवा लेते
हैं । अत जब हम कपडा पहन लेते हैं तो शरीर के चमड़े की एक
बहुत बडी क्रिया को रोक देते हैं । ठण्डे देश के लोग ज्यों-ज्यों
आलसी एव सुस्त होते गये उन्हें कपडे की आवश्यकता प्रतीत होती
गयी । जब वे ठण्ड सहन नहीं कर सके तब पोशाक की प्रथा चल
पडी । अन्त में लोगो ने पोशाक को आभूषण का स्थान दे दिया ।
अब तो पोशाक जाति, देश का भेद बनाने के लिए आवश्यक हो
गया है ।

सचमुच प्रकृति की तरफ से मनुष्य को चमडे की एक अच्छी
पोशाक मिली है । यह केवल हम लोगो का भ्रम है कि शरीर नगा

रहने से बुरा मालूम होता है। क्योंकि अच्छा-से-अच्छा चित्र तो नगी दशा में ही दिखलाया जाता है। पोशाक से हम अगो को ढँक कर उनका दोष छिपाते है और इस तरह प्रकृति के कामो में बाधा पहुँचाते है। भेष बनाने में भी हम पैसो को बरबाद करते है। सब प्रकार से मनुष्य अपनी सौन्दर्य बढाना चाहता है। शीशे में मुह देख कर अपनी सुन्दरता पर इतराता है। अगर ऐसे स्वभाव से हमलोगों की नजरो में कुछ अन्तर न पडे तो हम सोच सकते है कि मनुष्य का सब से सुन्दर रूप नग्न अवस्था ही में दिखलाई देता है और उसी से वह स्वस्थ भी रह सकता है। शायद कपडो से सन्तुष्ट न होकर हम लोग गहना पहनना अपना कर्तव्य समझने लगे है।

अधिकाश मनुष्य पैरो में कडा, कानो में बाली और हाथ में अँगूठी पहनते है। इनसे बीमारियाँ उत्पन्न होती है। यह जानना मुश्किल है कि इनके पहनने से कौन-सी शोभा बढती है। इस विषय में स्त्रियो ने तो और भी कमाल कर डाला है। वे पैरो में वजनी कडे और पायजेब पहनती है, जिससे पैर उठना भी कठिन हो जाता है। नाक में वजनी नथ लटकी रहती है और कानो में बालियाँ गुथी रहती है। हाथो के गहने का तो कुछ पूछना ही नही है। इस पहिरावे से उनके शरीर पर मैल जमी रहती है। कान और नाक में तो खूब ही मैल जम जाती है। वे इस तरह के अपने गन्दे बनाव को शृगार समझती है और पैसा पानी की तरह बहाती हैं। ऐसा करके अपनी जान को खतरे में डालने से तनिक भयभीत नही होती। हमलोग अभिमान के कारण मूर्ख बन बैठे है। ऐसे अनेक उदाहरण मिलते है कि कितनी स्त्रियाँ कानों में फोडा हो जाने पर भी अपनी बालियाँ नही उतारती। फोडो से हाथ पक जाने पर भी जेवर नही उतारती। यद्यपि उनकी अँगुलियाँ सूज जाती है फिर भी वे अँगूठियो को इस ख्याल से नहीं उतारती कि उनकी सुन्दरता में कुछ कमी आ जावेगी।

पहिनावे में पूर्ण सुधार करना साधारण बात नही । लेकिन कम-से-कम हम सभी के लिए यह मुमकिन है कि अपने सब गहने और अनावश्यक पहनावे को छोड दें । रीति-रिवाज के लिए उनमें से कुछ का प्रयोग कर सकते हैं और शेष को अलग कर सकते हैं। जिनकी यह धारणा है कि ये सब पहिनावे केवल दिखावा-मात्र हैं, वे अपने पहिनावे में बहुत कुछ परिवर्तन कर सकते हैं और ऐसा कर अपने को स्वस्थ रख सकते हैं ।

आज-कल अधिकतर लोगो का यह ख्याल हो गया है कि अपनी प्रतिष्ठा और सुन्दरता के लिए अंग्रेजी ढग की पोशाक आवश्यक हैं । इस विषय पर यहाँ तर्क का स्थान नही है । यहाँ पर इतना ही कह देना काफी है कि अंग्रेज लोगो की पोशाक उनके ठण्डे मुल्क के लिए भले ही उपयुक्त हो, लेकिन वह हिन्दुस्तान के लिये व्यर्थ हैं । चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, उनके लिए हिन्दुस्तानी पोशाक ही उपयुक्त होती है । हम लोगो का वस्त्र ढीला और खुला होना है । अत हमारे शरीर में हवा के प्रवेश करने में कोई अड़चन नही होती । काले कपडो में सूर्य की गर्मी रुक जाने से वह गर्म रहता है और शरीर को भी गर्म रखता है । सिर को पगडी में ढँके रहना हमारे लिए एक साधारण बात हो गयी है । जहाँ तक सम्भव हो सिर को खुला रखना चाहिए । बाल को बढाना, कघी करना और बीच में माग निकालना जंगलीपने की निशानी है । बढे हुए बालो में मैल और जूँ पड जाते हैं । अगर बालो के अन्दर फोडा निकल आवे तो उचित औषधि करना भी कठिन हो जाता है । खासकर उन लोगों के लिए पगडी का प्रयोग करते हैं, बाल बढाना मूर्खता है ।

पैरो के द्वारा भी हम बहुत से रोगों के शिकार हो जाते हैं । बूट और जूते पहनने वालो के पैर गन्दे हो जाते हैं और पसीना देने लगते हैं । जूता और मोजा उतारते समय जिसे बदबू की पहचान होगी उसका खडा रहना मुश्किल हो जाता है. । जूते का

दूसरा नाम चट्टियाँ है । इससे यह साबित होता है कि जब हमें काँटों में ठण्डक में अथवा धूप में चलना पड़े तभी जूतों को पहनना चाहिये और वह भी इस तरह कि जिनसे केवल तलवे ढँक सकें और बाकी पैर खुला रहे । खड़ाऊँ से यह आवश्यकता पूरी हो सकती है । जिनके सिर में दर्द रहता हो, शरीर निर्बल हो, पैरों में दर्द होता हो उनके लिये तो हमारी यह राय है कि वे नंगे पाँव चलने का अभ्यास करें । ऐसा करने से वे शीघ्र लाभ अनुभव करेंगे ।

९–पुरुष-स्त्री का संयोग

पिछले प्रकरणों के पढ़ने वालों से मेरी प्रार्थना है कि वे इस प्रकरण को और भी ध्यान से पढ़ें और इस पर विचार करें, क्योंकि यह विषय बहुत गम्भीर और महत्त्वपूर्ण है । अन्य प्रकरण भी उपयोगी हैं और वे अपना अलग-अलग महत्त्व रखते हैं, लेकिन जीवन के लिए इससे उपयोगी और महत्त्वपूर्ण दूसरा प्रकरण नहीं है । मैं पहले कह चुका हूँ कि इस पुस्तक में कोई ऐसी बात नहीं लिखी गयी है जिसका मैंने अनुभव न किया हो, अथवा जिस पर मेरा विश्वास न हो ।

स्वास्थ्य के बहुत से नियम हैं जिनकी आवश्यकता भी है । इनमें ब्रह्मचर्य का सबसे ऊँचा स्थान है । इसमें कोई शक नहीं कि स्वास्थ्य के लिए स्वस्थ फल, स्वच्छ वायु तथा पौष्टिक भोजन आवश्यक हैं, लेकिन अगर हम अपने सब संचित बल का नाश कर दें तो हम कैसे स्वस्थ रह सकते हैं । यदि हम अपना उपार्जन किया हुआ सब धन व्यय कर दें तो किस तरह धन-सञ्चय कर सकते हैं ? इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब तक स्त्री और पुरुष ब्रह्मचर्य व्रत धारण नहीं करेंगे कदापि स्वस्थ नहीं रह सकेंगे ।

ब्रह्मचर्य का क्या अर्थ है ? इसका अर्थ यही है कि पुरुष-स्त्री का और स्त्री पुरुष का भोग न करें । वे एक दूसरे को इस अभिप्राय से स्पर्श न करें जिससे मन में विकार उत्पन्न हो । इन्हें इन्द्रियों को दमन करके उस शक्ति की रक्षा करनी चाहिये जिसे ईश्वर ने हमें प्रदान किया है । हमें ऐसा करके अपनी शारीरिक, मानसिक, एवं आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना चाहिये ।

लेकिन प्रति दिन हम क्या दृश्य देखते है ? हम यही देखते हैं कि स्त्री, पुरुष, वृद्ध और युवा सभी कामान्ध हो रहे हैं जिसके कारण वे उचित-अनुचित का विचार खो बैठे है । हमें यहां तक देखने में आता है कि छोटे-छोटे बालक और बालिकायें भी इस कुटेव में पड कर पागल हो रही हैं । मैं स्वयं इसके फेर में पड चुका हूँ । एक क्षण की तृप्ति के लिए हम अपने पूर्वसंचित बल को खो देते हैं और ज्यों ही इस भूल की छूत दूर हो जाती है, हम अपने को बुरी दशा में पाते है । दूसरे दिन सुबह हमें कमजोरी और सुस्ती मालूम होने लगती हैं और किसी काम के करने को जी नहीं चाहता तब हम अपनी कमजोरी को दूर करने के लिए औषधियों का आश्रय लेते है । इसी तरह हमारे दिन व्यतीत होने लगते है और असमय में ही बुढापा आ घेरता है, फलतः हम निकम्मे और भारस्वरूप हो जाते है ।

लेकिन प्रकृति यह नही चाहती । उसका नियम ठीक इसके प्रतिकूल है । ज्यों-ज्यों हम बुड्ढे होते जायें, हमारी बुद्धि भी बढनी चाहिए और जितना भी हम अधिक दिन जीवित रहें हमें अपने अनुभव से दूसरों को लाभ पहुँचाना चाहिए । जो सच्चे ब्रह्मचारी हैं वे ऐसा ही करते हैं । वे मृत्यु से भी नही डरते और न उनकी शिकायत ही करते हैं । वे प्रसन्नतापूर्वक मृत्यु की गोद में बैठते है और धीरतापूर्वक परमात्मा के सम्मुख न्याय के लिये उपस्थित होते हैं । ऐसे ही स्त्री-पुरुषों का जीवन सार्थक कहा जा सकता है ।

सांसारिक मनुष्य इन विचारों को कार्य रूप में कैसे ला सकते हैं ? विवाहित मनुष्य क्या करें ? बाल-बच्चे वालों को क्या करना चाहिए, और जो अपने मन को वश में नहीं कर सकते, उन्हें क्या करना चाहिए ? इन सबका उचित उत्तर पहिले ही दिया जा चुका है । उस आदर्श को सामने रखते हुए हमें ठीक वैसा ही करना चाहिए । जब छोटे-छोटे बच्चों को अक्षरों का ज्ञान कराया जाता है तो अक्षरों की सूरत उनके सामने रखी जाती है और वे ठीक वैसी ही शक्ल बनाने की कोशिश करते हैं । यदि हम लोग ठीक ऐसे ही नियमानुसार ब्रह्मचर्य का पालन करते जायें, तो हमें अवश्य लाभ होगा । यदि हम विवाहित हैं तो हमें अपने ब्रह्मचर्य का तभी नाश करना चाहिए जब सन्तानोत्पत्ति करना हो । यही प्रकृति का नियम है । जो इसके अनुसार चौथे पाँचवें वर्ष ब्रह्मचर्य तोड़ते हैं वे कामी नहीं कहलाते और न उनका स्वास्थ्य ही बिगड़ सकता है । लेकिन अफसोस है कि हम लोगों में से बहुत कम सन्तानोत्पत्ति के लिए ऐसा करते हैं । हजारों विषय-वासना की तृप्ति के लिए ही ऐसा करते हैं । फल यह होता है कि उनकी सन्तान उनकी इच्छा के विरुद्ध होती है । काम के वेग में हम लोग प्रायः उसके फल को नहीं सोचते । इस विषय में स्त्री की अपेक्षा पुरुष ही अधिक दोषी होते हैं । वे इतना कामान्ध हो जाते हैं कि वे इतना भी नहीं सोच सकते कि स्त्री सन्तान देने योग्य है या नहीं । पाश्चात्य देशवालों ने तो इनकी हद ही कर दी है । वे भोग-विलास करते हैं । हजारों पुस्तकें इस विषय पर लिखी गयी हैं । हजारों इसका व्यवसाय करते हैं और घोषणा करते हैं कि अमुक काम करने से भोग-विलास करने पर भी सन्तान उत्पत्ति का भय नहीं । हम लोग अभी इस पाप से [illegible] हैं, लेकिन स्त्री को सन्तान के बोझ से बोझिल करते हम जरा नहीं हिचकते । हम लोग यह नहीं सोचते कि हमारी सन्तान [illegible], वीर्यहीन, पागल और निर्बुद्धि होगी, बल्कि ऐसी सन्तानों

इस प्रकरण के पढ़ने वाले माता-पिता से मेरी प्रार्थना है कि वे अपनी सन्तान की शादी बचपन में न करें । उन्हें उनके भविष्य का भी ख्याल रहना चाहिए । उन्हें समाज एवं प्रतिष्ठा के लिए ब्याह करने की इच्छा छोड़ देनी चाहिए । यदि वे सच्चे हितैषी हैं तो उन्हें उनके शारीरिक तथा मानसिक बल को बढ़ाने की ओर ध्यान देना चाहिए । इससे बढ़कर और बुरी बात क्या हो सकती है कि बचपन में ही उनका हम ब्याह कर उनके ऊपर एक बोझ लाद देते हैं और उनका स्वास्थ्य खराब कर उनका भविष्य बिगाड़ देते हैं।

स्वास्थ्य का नियम बतलाता है कि जिस स्त्री का पुरुष मर गया हो या जिस पुरुष की स्त्री मर गयी हो, वह दोबारा ब्याह न करे । कुछ डाक्टरों की राय है कि युवा स्त्री-पुरुष को वीर्य-पात का अवसर मिलना चाहिए और कितने ही इसके विपरीत राय देते ह । अब अगर हम यह सोच कर कि एक पक्ष हमारा समर्थन करता है—अपने वीर्य का नाश करें, यह अनुचित है । मैं अपने निजी अनुभव के आधार पर निःसंकोच कहूँगा कि वीर्य-पात स्वास्थ्य के लिए बड़ा ही हानिकारक है और ऐसा करना निरा मूर्खता है । बहुत दिनों का संचित किया हुआ वीर्य यदि एक बार भी नष्ट हो जाता है तो उसकी पूर्ति करते हुए कुछ दिन लग जाते हैं फिर भी पूरा नहीं हो पाता । टूटा हुआ शीशा जोड़ा जा सकता है लेकिन फिर भी वह टूटा हुआ ही कहा जायगा ।

पहिले बतलाया जा चुका है कि वीर्य-रक्षा के लिए साफ हवा, साफ पानी, पुष्टिकर भोजन, साधारण रहन-सहन और स्वच्छ विचारों की अति आवश्यकता है, आचरण और योग्यता में इतनी घनिष्ठता है कि एक सदाचारी मनुष्य ही निरोग हो सकता है । यह मनुष्य जो अपने किये हुए दुष्कर्मों को भूल एक सदाचारी बनने की कोशिश करता है, वह अपने प्रयास में शीघ्र ही सफलीभूत होता है । जिन्होंने थोड़े दिनों के लिए भी ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है उन्हें अनुभव हुआ है कि थोड़े समय में ही उनके शारीरिक एवं मानसिक बल

का कितना विकास हुआ है। जिन्हें इस प्रकार के अनुभव हो गए हैं वे किसी भी हालत में अपने सचित वीर्य-कोष को घटाना नही चाहेंगे। मैं ब्रह्मचर्य के महत्त्व को जानते हुए भी स्वय उसके नियमो का उलघन करके उसके दुष्परिणाम को भी भोग चुका हूँ। जब मैं अपनी अवस्था की याद करता हूँ तो लज्जा से मेरा सिर झुक जाता है। लेकिन अपने पिछले कुकर्मों के फल से मुझे अच्छी शिक्षा मिली और अब वर्तमान एव भविष्य में अपने खजाने को सचित करने का बराबर प्रयत्न कर रहा हूँ और उससे बहुत लाभ उठा रहा हूँ। मेरा भी ब्याह बचपन ही में हो गया था और कम उम्र में ही मैं कुछ बच्चो का पिता बन बैठा था, लेकिन जब मैंने अपनी परिस्थिति पर विचार किया तो अपने को बहुत ही भीषण एव पतित अवस्था में पाया। यदि पाठको में से एक ने भी इस पुस्तक से लाभ उठाया तो मैं समझूँगा कि पुस्तक के लिखने का मुझे उचित पुरस्कार मिल गया है। बहुत से लोगों का यह कहना है और मेरा भी विश्वास है कि मेरा मस्तिष्क कमजोर नहीं है। और मेरे अन्दर पूरा उत्साह है। कुछ लोग तो मुझे हठी तक कहने में सकोच नही करते। मेरा मस्तिष्क और शरीर दोनों नीरोग है लेकिन जब मैं अपने मित्रो के साथ अपनी तुलना करता हूँ तो अपने को पूर्ण स्वस्थ कह सकता हूँ। अब बीस वर्ष तक विषय भोग के पश्चात् मैं अभी इतना स्वस्थ हूँ। यदि उन बीस वर्षों में भी मैं विषय-वासना से वचित रहता तो आज कितना स्वस्थ होता। यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि यदि उन दिनो मैंने पवित्र-जीवन व्यतीत किया होता तो इस समय से हजार गुना अधिक स्वस्थ और उत्साही होता और इस तरह अपने भाइयो का अपने को और देश को कुछ अधिक लाभ पहुँचा सकता। जब मुझ जैसे साधारण व्यक्ति की यह हालत है तो जो मनुष्य अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करेगा, उसका मस्तिष्क, शरीर और उसके अवयवो का कितना विकास होगा।

जब ब्रह्मचर्य के नियम इतने कठिन है तो उन लोगों के विषय में क्या कहा जा सकता है जो सदैव स्त्री-संभोग करने के अपराधी है। वेश्या तथा पराई स्त्री पर कलुषित विचार रखने से बहुत बुरा परिणाम होता है। इसका विचार आरोग्य सम्बन्धी बातो के साथ नही किया जा सकता। यह तो धर्म और नीति का विषय है। यहाँ इतना ही कहना उचित होगा कि वेश्या-गमन एव पर-स्त्री सम्भोग के कारण हजारो मनुष्य गर्मी, सुजाक तथा ऐसे ही अन्य रोगो के शिकार होते देखे जाते है। प्रकृति ऐसे स्त्री-पुरुषो को शीघ्र दण्ड देती है। उनके पाप फूट निकलते है और उन्हें डाक्टर का दरवाजा खटखटाना पड़ता है। जिस स्थान पर यह बातें नही होती वहाँ ५० प्रतिशत वैद्य और डाक्टर बेकार हो जाते हैं। मनुष्य जाति को इन बीमारियो में फँसा देख डाक्टर लोग यह कहने को बाध्य होते है कि यदि पर-स्त्री-गमन का यही सिलसिला जारी रहा तो औषधियो के सेवन पर सन्तान-नाश की सम्भावना बनी रहेगी। इन रोगों की दवा बहुत विषैली होती है। अत रोग दूर हो जाने पर भी उसका प्रभाव बहुत बुरा पडता है। ये रोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी होते चले जाते हैं।

इस विषय को समाप्त करते हुए मै विवाहित स्त्री-पुरुषों को सक्षेप में ब्रह्मचर्य पालन करने के नियमों को बतला देना चाहता हूँ। भोजन हवा और पानी के नियमो का पालन करने ही से ब्रह्मचर्य की रक्षा नही हो सकती। पुरुष को स्त्री के साथ एकान्त में नही सोना चाहिये। स्त्री-पुरुष को विषय-भोग ही के लिए एकान्त-वास की आवश्यकता होती है। उन्हें रात में अलग-अलग होना चाहिए। दिन में अच्छे विचारो और कामों में लगे रहना चाहिए। उन्हें ऐसी किताबें पढ़नी चाहिए जो उनके अन्दर अच्छे विचार उत्पन्न करें, उन्हें महान् पुरुषो का जीवन-चरित्र पढ़कर शिक्षा लेनी चाहिए। उन्हें सदा स्मरण रखना चाहिये कि स्त्री-संभोग ही सब रोगों की जड़ है। विषय-इच्छा उत्पन्न हो तब उन्हें पानी से स्नान

कर लेना चाहिए । इससे शरीर के अन्दर की महाग्नि शान्त पड़ जायगी और इसका परिणाम स्त्री-पुरुषों के लिए उपकारी होगा । यह काम कठिन है परन्तु कठिनाइयों पर विजय पाने के लिए ही तो हम पैदा हुए हैं । जो लोग इन कठिनाइयों का सामना करने से पीछे हटेंगे वे कभी नीरोग नहीं रह सकते ।

१०—साधारण उपचार

(वायु-चिकित्सा)

अब तक हम लोग स्वास्थ्य प्राप्ति और उसकी रक्षा के विषय में विचार किए हैं । यदि सब स्त्री-पुरुष स्वास्थ्य के नियमों का पालन करें और स्वस्थ रहने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करें, तो आगे लिखे जाने वाले प्रकरणों की आवश्यकता ही न हो । क्योंकि ऐसे व्यक्तियों को शारीरिक या मानसिक व्याधियां सता ही नहीं सकतीं । किन्तु ऐसे स्त्री-पुरुष बहुत कम मिलते हैं । आजकल ऐसा कौन है जिसको किसी प्रकार का रोग न हो । स्वास्थ्य सबंधी जितने नियम बतलाये जा चुके हैं उनका जितना ही पालन करेंगे उतना ही नीरोग रहेंगे । लेकिन जब हम रोग-ग्रसित हो जायें तो उसका उचित उपचार हमारा कर्तव्य हो जाता है । आगे के प्रकरणों में यही बतलाया जायगा कि डाक्टरों की सहायता के बिना उन रोगों का उपचार कैसे किया जा सकता है ।

स्वास्थ्य के लिए स्वच्छ वायु जितनी आवश्यक है रोगों के उपचार के लिए भी उसकी वैसी ही जरूरत है । उदाहरण के लिए उस मनुष्य को लीजिये जिसे गठिया का रोग हो । यदि उसे गर्म हवा की भाप दी जाय तो उसको पसीना आ जायगा और उसके जोड़ खुल जायेंगे । इस किस्म की वायु-चिकित्सा को टर्किश बाथ कहते हैं । यदि किसी मनुष्य को अधिक ज्वर हो गया हो और बुखार की गर्मी से उसका शरीर जल रहा हो तब यदि उसके

सभी कपड़े उतार कर उसे खुली हवा में सुला दिया जाय तो उसके बुखार में शीघ्र कमी हो जाती है और उसे कुछ आराम मिलता है। यदि उसे ठण्ड मालूम हो और एक कम्बल ओढ़ा दें तो उसके बदन में पसीना निकलने लगता है और बुखार कम हो जाता है, लेकिन हमलोग साधारणतः ऐसी दशा में इसके प्रतिकूल काम करते हैं। रोगी यदि खुली हवा में रहना चाहता है तो भी उसके कमरे के तमाम दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द कर देते हैं और उसका सारा शरीर यहाँ तक कि सिर और कान भी ढँक देते हैं। फल यह होता है कि रोगी घबड़ाने लगता है और कमजोर पड़ जाता है। यदि गर्मी के कारण बुखार आया हो तो उपरोक्त वायु का उपचार बहुत ही लाभदायक होता है। इसमें डरने की कोई जरूरत नहीं। हाँ, इसका ख्याल रखना चाहिये कि रोगी को अधिक ठण्ड न लगने पावे। यदि वह बिलकुल नंगा न रह सके तो उसे कपड़े से ढँक कर बाहर खुली हवा में रखना चाहिए।

जीर्ण ज्वर और ऐसी ही अन्य बीमारियों के लिये आब-हवा बदलना एक अकसीर दवा है। साधारणतः जो लोग आब-हवा बदलते हैं, वे एक प्रकार का वायु-उपचार ही करते हैं। हम लोग बहुधा अपने घर को इस भाव से भी बदलते हैं कि भूत-प्रेत के वास से हमारा घर रोगी हो गया है। यह हम लोगों का भ्रम है, क्योंकि भूत-प्रेत तो घर की दूषित वायु ही हुआ करती है। वास-स्थान बदल देने से हवा बदल जाती है और फलतः रोग छूट जाता है। वास्तव में स्वास्थ्य और वायु से इतनी घनिष्टता है कि हवा का बदलना बुरा अथवा भला फल लाये बिना नहीं रहता। हवा बदलने के लिए धनी लोग तो दूर-दूर जा सकते हैं, लेकिन निर्धन लोग भी एक गाँव से दूसरे गाँव में जा सकते हैं और यदि यह भी न हो सके तो एक घर को छोड़कर दूसरे घर में तो जा ही सकते

है। यदि रोगी को उसके कमरे से दूसरे कमरे में कर दिया जाय तो भी बहुत कुछ लाभ हो सकता है। हाँ, इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि नये बदले हुए स्थान की वायु स्वच्छ हो। इसी तरह उदाहरण के लिए जो रोग नम हवा के कारण उत्पन्न हुआ है। यदि स्थान बदलकर हम उसमें भी नम हवा में जाते हैं तो वह रोग कदापि नहीं छूट सकता। कभी-कभी हवा के परिवर्तन से कुछ लाभ नहीं होता। इसका मुख्य कारण यही है कि हम बदले हुए स्थान पर जाकर पूरी सावधानी नहीं रखते। इस प्रकरण में वायु के साधारण उपचार ही बतलाए गये हैं। लेकिन इसके पहले वायु प्रकरण में स्वच्छ वायु का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका पूरा विवेचन किया गया है। इसलिए मैं अपने पाठकों के दोनों प्रकरणों को साथ-साथ पढ़ने की सलाह दूँगा।

११—जल-चिकित्सा

चूँकि हवा एक ऐसी वस्तु है जिसे हम देख नहीं सकते इसलिए उसके किये हुए अद्भुत कामों को भी हम नहीं समझ पाते। लेकिन जल और उसकी चिकित्सा के लाभ को हम अच्छी तरह समझ सकते हैं। पानी के भाप-चिकित्सा को सभी जानते हैं। बुखार में अक्सर हम लोग उसका उपचार करते हैं। असाध्य सिर दर्द में भी इसके उपचार से बहुत लाभ होता है। गठिया के दर्द में पहले पानी की भाप देकर ठंडे पानी में स्नान कराने से बहुत कुछ लाभ होता है। शरीर के फोड़े-फुन्सी जो केवल मरहम पट्टी से नहीं आराम होते, ठंडे पानी के प्रयोग से आराम हो जाते हैं।

थकावट को दूर करने के लिये यदि पहले भाप लेकर ठंडे पानी से स्नान किया जाय तो थकान दूर हो जाती है। ऐसे ही यदि नींद

न आती हो तो पहले भाप लेकर ठंडे पानी से स्नान कर यदि खुली हवा में आदमी सोवे तो शीघ्र नींद आ जाती है ।

जहाँ पर भाप से काम लेने को कहा है, वहाँ हम गरम पानी का प्रयोग कर सकते हैं । यदि पेट में दर्द हो तो गर्म पानी को बोतल में भर कर उसके ऊपर पतला कपड़ा लपेट कर पेट पर रखा जाय तो शीघ्र दर्द आराम हो जाता है । जब कभी कै (उल्टी) करने की आवश्यकता हो तो यदि पेट भर गरम पानी पी लिया जाय तो कै आसानी से हो जाती है । जिन्हें कब्ज का रोग है वे यदि सबेरे उठकर दातुन करने के पश्चात् गरम पानी पी लें तो दस्त खुलकर आता है । सर गार्डन स्प्रिंग जो कभी केप के प्रधान थे, बहुत स्वस्थ थे । सोने के पहले या सोकर उठने के बाद गरम पानी पी लिया करते थे । कितने ही लोगों की ऐसी आदत है कि सबेरे गरम चाय पीने के बाद ही उन्हें दस्त आता है, जिससे वे भ्रम में रहते हैं कि चाय की वजह से ही उन्हें दस्त आता है । लेकिन चाय से हानि होती है और दस्त लाने का मुख्य कारण चाय का गरम पानी है ।

भाप लेने के लिये एक प्रकार का चौखटा होता है, लेकिन उसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है । बेंत की बुनी कुर्सी के नीचे स्पिरिट या किरासन तेल का चूल्हा या जलती लकड़ी या कोयले की छोटी अंगीठी रख ली जाय और उसके ऊपर एक छोटी-सी पतीली पानी से भर कर और ढक्कन से ढँक कर रख दी जाय, फिर कुर्सी के ऊपर एक कम्बल इस तरह रखे जिससे आग की आँच न लगे । तब रोगी को उस कुर्सी पर बैठा दिया जाय और उसे कम्बल ओढ़ा दिया जाय, इसके बाद पतीली का ढक्कन हटा जाय ताकि जो भाप पतीली से उठे, रोगी को लगे । हम लोग : रोगी के सिर को कपड़े से ढँके रहते हैं, यह हानिकारक है । की गर्मी रोगी के बदन में होकर उसके सिर तक जाती है उसके शरीर में पसीना आने लगता है । यदि रोगी बहुत

से खून बन्द हो जाता है। नाक में गून (नकसीर) आना हो तो सिर पर ठण्डे पानी की धार गिराने से खून का आना बन्द हो जाता है। नाक में किसी तरह की बीमारी अथवा सिर दर्द क्यों न हो, दोनों समय नाक से पानी खींचने से अच्छा हो जाता है। नाक का एक छेद बन्द कर दूसरे से पानी चढ़ाया जाय, फिर बन्द किये छेद द्वारा बाहर निकाल दिया जाय अथवा दोनों छिद्रों से पानी ऊपर चढ़ाया जाय और मुँह के द्वारा निकाल लिया जाय। यदि नाक साफ हो तो ऐसा करते समय पानी मुह से पेट के अन्दर चला जाय तो भी हानि नहीं होती। नाक को साफ रखने का भी यह अच्छा तरीका है। जिनसे नाक द्वारा पानी ऊपर नहीं चढ़ाया जा सकता हो वे पिचकारी का प्रयोग कर सकते हैं, लेकिन दो-चार बार कोशिश करने से वे भी नाक से ही पानी खीच सकते हैं। सबको इसका अभ्यास करना चाहिए क्योंकि यह एक सरल उपाय है और इससे सिर दर्द, नाक की मैल और बदबू बन्द हो जाती हैं। बहुत से लोग गुदा के द्वारा पेट में पानी चढ़ाते डरते हैं और कितने ही यह सोचते हैं कि ऐसा करने से शरीर निर्बल हो जाता है, लेकिन यह उनका भ्रम है। शीघ्र दस्त लाने के लिए गुदा द्वारा पिचकारी लेने के सिवा और कोई दूसरा उत्तम इलाज नहीं है। अनेक रोगों में जब कोई दूसरा इलाज काम नहीं करता तब यही लाभदायक सिद्ध होता है। इस क्रिया से शरीर का मल साफ हो जाता है और नया जहर नहीं जमता। जो लोग वात रोग, बादी, मेदे की खराबी इत्यादि से बीमार हों, उन्हें गुदा द्वारा एक सेर पानी की पिचकारी लेनी चाहिये। इससे शीघ्र दस्त हो जायगा इस विषय में एक लेखक लिखता है कि वह बदहजमी के चंगुल में पड़ गया था। उसने अनेक दवाइयाँ की, किन्तु उनसे कोई लाभ न हुआ बल्कि शरीर कमजोर होकर पीला पड गया। अन्त में उसने पिचकारी लेना प्रारंभ किया। इस प्रयोग के कुछ ही दिन बाद

उसे भूख लगने लगी और वह शीघ्र ही स्वस्थ हो गया । जिस बीमारी में शरीर पीला पड जाता है वह भी पिचकारी द्वारा अच्छी की जा सकती है । अगर अधिक पिचकारी लेने की आवश्यकता पडे तो ठण्डे पानी की लेनी चाहिये । गरम पानी की पिचकारी से निर्बल होने की सम्भावना रहती है, लेकिन यह दोष पिचकारी का नहीं है ।

जर्मन डाक्टर लुईकूने की यह राय है कि जल-चिकित्सा सबसे उत्तम है । इस विषय पर लिखी हुई उसकी पुस्तकों की इतनी ख्याति बढ गयी है कि दुनियाँ की प्रायः सभी भाषाओं में उनके अनुवाद हो गये हैं । हिन्दी भाषा में भी उनके अनुवाद हुए हैं । लुईकूने-सिद्धान्त के अनुसार सब रोगों की जड मेदा है । जब इसमें अधिक गर्मी रहती है तो शरीर के बाहरी भाग में फोडे फुन्सी या दूसरे चर्म रोग हो जाते हैं । लुईकूने से पहिले के लेखकों ने भी जल-चिकित्सा पर अपनी राय दी है । "पानी का उपचार" नामक पुस्तक लुईकूने की पुस्तकों से बहुत पहिले लिखी जा चुकी थी । लेकिन लुईकूने से पहिले किसी ने भी यह नहीं बताया कि रोग की जड मेदा है । हमें मानना पड़ेगा कि लुईकूने का सिद्धान्त बिलकुल ठीक है । मि० ट्रिटन जो डरबन के मजिस्ट्रेट थे धनुर्वात से बिलकुल अशक्त हो गये थे । उन्होंने अनेक औषधियों का सेवन किया, किन्तु उससे कोई लाभ नहीं हुआ । अन्त में लुईकूने के इलाज से वे अच्छे हो गये । वह अधिक समय तक डरबन में सुख से रहे और सदा लोगों को लुईकूने के इलाज द्वारा लाभ उठाने की राय देते रहे । लुईकूने की पद्धति द्वारा इलाज करने वाली संस्था नेटाल में स्वीटवाटर्स नामक स्टेशन के समीप अब भी है ।

डाक्टर लुईकूने लिखते हैं कि मेदा की गर्मी पानी से मिटती है । इसके लिये उसने ठंडे पानी में स्नान करना बतलाया है ताकि मेदे के आस-पास के भाग ठण्डे रह सकें । आसानी से स्नान करने के लिये उसने एक प्रकार का टीन का टब बनाया है, लेकिन इसके

किया भी हमारा काम चल सकता है । पुरुष या स्त्री के कद के
अनुसार, १६ इंच या उससे ज्यादा बड़ा टीन का टब कुछ लम्बाई
लिये खास आकार का बाजार में बिकता है । टब को चौथाई जितना
ठंडे पानी से भर कर उसमें रोगी को इस ढंग से बिठाना चाहिये
कि उसके पैर और धड़ पानी से बाहर रहें । नाभी से लेकर
जांघ तक का हिस्सा पानी के भीतर रहे । सबसे अच्छा तरीका यह
है कि पैर किसी तख्ते या पटरे पर रख दिए जायें । रोगी को
टब में नंगा बिठाना चाहिये । सर्दी मालूम होने पर धड़ कम्बल
से ढंक दिया जाये । ऐसी हालत में रोगी का कुर्ता इत्यादि भी पह-
नाया जा सकता है, लेकिन ये सब चीजें पानी के बाहर रहनी
चाहिये । स्नान की जगह ऐसी होनी चाहिये जहां धूप और
हवा अच्छी तरह पहुंच सके । रोगी को पानी के भीतर अपना पेट
किसी खुरदुरे कपड़े से मलना चाहिये । यदि रोगी स्वयं ऐसा न
कर सके तो उसे किसी दूसरे से मलवाना चाहिये ।

यह स्नान पांच से तीस मिनट तक या इससे भी अधिक देर तक
किया जा सकता है । इस स्नान का प्रभाव शीघ्र पड़ता है । बादी
के रोगी को तो शीघ्र हवा खुलने लगती है, और डकार आने लगती
है, दस्त साफ होने लगता है, नींद न आने वालों को नींद आने
लगती है । अधिक सोने वालों के नींद में कमी आ जाती है साथ
ही स्फूर्ति आ जाती है । बदहजमी से ही अतिसार तथा कोष्ठबद्ध
के रोग होते हैं । इस बीमारी के लिए कूने का स्नान अति उत्तम है
पुरानी बवासीर इस स्नान से तथा खानपान के परहेज से जाती
रहती है । जो लोग अधिक थूकते हैं उनके लिए भी स्नान लाभ-
दायक होता है । इस स्नान से कमजोर भी बलवान हो जाते हैं ।
बहुतेरों का गठिया तक अच्छा हो जाता है । सिर के दर्द में यदि
यह स्नान किया जाय तो दर्द हल्का पड़ जाता है । इस स्नान से

गर्भवती स्त्री की प्रसवकाल की पीड़ा कम हो जाती है। बालक, जवान, बुड्ढे स्त्री-पुरुष सबके लिए यह स्नान लाभप्रद है।

एक और उपचार है जिसे "गीली चादर का उपचार" कहते हैं। इससे भी अनेक रोग दूर हो जाते हैं। एक मेज या कुर्सी को खुली हवा में रख दो। उस पर तीन-चार कम्बल बिछा दो। उन कम्बलों पर तीन चादरें ठण्डे पानी में भिगो कर बिछा दो। इसके बाद रोगी को नंगे उस पर लेटा दो। रोगी का हाथ बगल में हो। इसके बाद एक एक करके सभी चादरें और कम्बल रोगी के बदन में लपेट कर उसे अच्छी तरह से ढँक दो, यदि धूप हो तो रोगी के मुँह पर गीला कपड़ा या रुमाल रख दो, लेकिन नाक खुली रहनी चाहिये। पहले तो रोगी काँप उठेगा, बाद में उसको गर्मी लग कर पसीना निकलेगा। यह उपचार पाँच मिनट तक करना चाहिये। फिर रोगी के बदन से कपड़े हटा कर ठंडे पानी से स्नान करा दो। बुखार शीतला और चर्म रोग इससे दूर हो जाते हैं। यह निश्चय है यदि स्वास्थ्य के नियमों का भलीभाँति पालन किया गया, तो जल-चिकित्सा से रोगी तुरन्त अच्छा हो सकता है।

—o—

१२—मिट्टी का उपचार

अब मैं मिट्टी के उपचार के विषय में कुछ बतलाऊँगा। इसका उपचार कभी-कभी जल-चिकित्सा से बढ़कर आश्चर्यजनक चमत्कार दिखलाने में उपयुक्त सिद्ध हुआ है। मिट्टी में इतनी शक्ति वर्तमान है कि यह सुनकर हमें चकित हो जाना पड़ता है क्योंकि हमलोगों का स्थूल शरीर भी इसी मिट्टी से बना है। वास्तव में इसका प्रयोग हम पवित्रता की दृष्टि से करते हैं। बुरे गन्ध को मिटाने के लिए हम उस स्थान को मिट्टी से पोतते हैं। हम सड़ी-गली वस्तुओं को मिट्टी से ढँक देते हैं [illegible]

दूषित न करे । हम अपने हाथ और गुप्त इन्द्रियों को भी इससे धोते हैं । योगी इसे अपने शरीर में मलते हैं । कुछ लोग फोड़े-फुन्सियों को आराम करने के लिए इसका प्रयोग करते हैं । शव को मिट्टी के अन्दर गाड़ देते हैं ताकि सड़ने पर उसकी बुरी गन्ध वायुमण्डल को दूषित न कर सके । इन सब क्रियाओं से यही साबित होता है कि मिट्टी के अन्दर स्वच्छता और आरोग्य प्रदान करने की शक्ति है ।

जिस तरह डा० लुईकूने जल-चिकित्सा के विषय में अनेक उपयोगी बातें बतलायी हैं, उसी तरह एक जुस्ट नामक जर्मन डाक्टर ने मिट्टी के उपचार के विषय में अनेक लाभ अनुभव करके इसकी उपयोगिता का वर्णन किया है । उसने यहाँ तक बतलाया है कि बहुत से असाध्य रोग इसके द्वारा आराम किये जा सकते हैं । वह एक घटना का इस प्रकार वर्णन करता है कि किसी आदमी को साँप काट लिया । सब लोगों ने उसको मरा हुआ समझकर उसकी औषधि करनी छोड़ दी, लेकिन मैंने उसे थोड़ी देर तक मिट्टी से ढँककर उसे जीवित कर दिया । इस घटना की सत्यता में कुछ सन्देह नहीं किया जा सकता । सभी जानते हैं कि जमीन में गाड़ने से अत्यधिक गर्मी उत्पन्न होती है । यद्यपि मैं यह नहीं कह सकता कि मिट्टी का प्रभाव उस पर किस तरह पड़ा, लेकिन मुझे मानना पड़ता है कि मिट्टी के अन्दर जहर खींच लेने की शक्ति है । हाँ, यह हो सकता है कि हरेक साँप का काटा हुआ इस प्रकार आराम न हो; फिर भी जब किसी को साँप काटे तो यह उपचार करना चाहिए । मैं अपने निजी अनुभव के आधार पर यह कह सकता हूँ कि बिच्छू या वैसे ही विषैले जीवों के काटने पर गीली मिट्टी का लेप बहुत लाभदायक है ।

मैंने स्वयं इसका उपचार निम्नांकित रोगों में किया है पेट, सिर, और आँख के एवं चोट की सूजन में मिट्टी की पुलटिस से दो-तीन

दिन में आराम होता है । मैं पहले शरीर के 'फ्रूटसाल्ट' के बिना कभी निरोग नहीं रह सकता था, लेकिन सन् १९०४ ई० में जब मुझे मिट्टी की उपयोगिता मालूम हुई तब मैंने उसका आश्रय लिया, तब से आज तक कोई अवसर नहीं आया कि मुझे 'फ्रूट साल्ट' का प्रयोग करना पड़ा हो । बड़े-से बड़े ज्वर में इसकी पुलटिस सिर पर और पेड़ू में बाँधने से एक दो घण्टे में ज्वर कम हो जाता है । चर्म रोग जैसे खुजली, दाद और फोड़े-फुन्सी इसके उपचार से शीघ्र आराम होते हैं । जले हुए स्थान पर इसका लेप करने से जलन कम हो जाती है और उस पर फफोले नहीं उठते । गर्मी का भी रोग इससे अच्छा हो सकता है । पाले से जब हाथ पैर लाल पड़ जाते हैं और सूज जाते हैं तब इसका प्रयोग बहुत लाभ पहुँचाता है । हड्डियों के जोड़ का दर्द इससे आराम होता है । इन अनुभवों से मैं इसी परिणाम पर पहुँचता हूँ कि इसका उपचार घरेलू रोगों में बहुत ही लाभदायक सिद्ध हो सकता है ।

यह बात अवश्य है कि सभी प्रकार की मिट्टी एक-सी उपयोगी और गुणकारी नहीं हुआ करती । जमीन खोदकर जो सूखी मिट्टी निकाली जाती है वह बहुत उपयोगी होती है । यह अधिक चिकनी नहीं होती । बालू मिली चिकनी मिट्टी सबसे उत्तम है । जो मिट्टी प्रयोग में लायी जाय उसमें गोबर या दूसरी कोई खराब वस्तु न मिली हो । पहले मिट्टी को बारीक पीसकर चलनी से छान लेना चाहिए, तब उसे ठंडे पानी में मिलाकर काम में लाना चाहिए । मिट्टी को अच्छी तरह आटे की भाँति गूँध लेना चाहिए । और तब उसे स्वच्छ कपड़े में रखकर पुलटिस बना लेना चाहिए । प्रयोग के बाद जब मिट्टी सूखने लगे तो पुलटिस को हटा देना चाहिए । आमतौर पर एक पुलटिस दो से तीन घण्टे तक ठहर सकती है । एक बार प्रयोग की हुई मिट्टी दुबारा काम में नहीं लानी चाहिये । हाँ, उस कपड़े को खूब साफ करके काम में ला सकते हैं । अगर

पुलटिस पेट पर रखनी हो तो पहले उसे गरम कपड़े से ढँक देना चाहिए, तब उस मिट्टी पर चढ़ाना चाहिए। हरेक आदमी को चाहिए कि एक टीन स्वच्छ मिट्टी अपने पास रखे ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसका प्रयोग आसानी से कर सके। ऐसा न हो कि किसी को बिच्छू काट दे और तब मिट्टी की तलाश की जाय। ऐसा करने से विष बदन में फैल जायगा। बिच्छू इत्यादि डंक मारनेवाले जानवरों को काटने पर जितना जल्दी मिट्टी का प्रयोग किया जायगा, उतना ही शीघ्र लाभ होगा।

—— ० ——

१३—ज्वर-चिकित्सा

अब हम कुछ खास रोग और उनकी औषधियों के विषय विचार करेंगे और सबसे पहले ज्वर के विषय में। क्योंकि इस बीमारी का हमारे यहाँ भयकर प्रकोप रहता है। हमारे शरीर में हरारत के कारण जब ताप बढ़ जाता है तब हम उसे ज्वर या बुखार कहते हैं। अंग्रेज डाक्टरों के मतानुसार ज्वर कई प्रकार का होता है और वे उनकी औषधि भी अलग-अलग करते हैं। लेकिन इस प्रकरण में दिए हुए उपचार और औषधि के प्रयोग से हम लोग सभी तरह के ज्वर को आराम कर सकते हैं। मैंने हर किस्म के ज्वर में यहाँ तक कि प्लेग में भी एक ही तरह का उपचार किया है जिसका फल सन्तोषजनक हुआ है। सन् १९५२ ई० में दक्षिण अफ्रीका के हिन्दुस्तानियों में बड़े जोरों का प्लेग फैला था। इसका प्रकोप इतना भयकर हो गया था कि चौबीस घण्टे के अन्दर तेईस बीमार व्यक्तियों में इक्कीस मरे और शेष दो अस्पताल पहुँचाये गये जिनमें से एक अस्पताल में ही मर गया, किन्तु दूसरा जिसके ऊपर मिट्टी की पुलटिस का प्रयोग किया गया था बच गया। हाँ, इतना अवश्य है कि इस घटना से हम निश्चय पूर्वक यह नहीं

चम्मच जैतून का तेल नीबू के रस में मिलाकर देना चाहिए
अगर उसे प्यास लगे तो पानी को एक घण्टा औटाने के बाद ठ
हो जाने पर देना चाहिए या नीबू का रस देना चाहिए। पा
उबाल कर ही देना चाहिए। ठण्डा पानी कभी भी नहीं देना
हिए। उसके पहिनने का वस्त्र भी साधारण और कम होना चा
और समय-समय पर उसको बदलते रहना चाहिए। इस उप
से टाईफाइड ज्वर वाले रोगी को भी आराम हो गया है और
पूर्ण शान्त हो गया। कुनैन के प्रयोग से भी रोग प्रत्यक्ष कम
जाता है, किन्तु इससे अन्य दूसरे रोग उत्पन्न हो जाते है। मलेरि
रोग के लिए कुनैन बहुत उपयोगी है, लेकिन मुझे मालूम है
इससे चिरस्थायी लाभ नहीं होता। मलेरिया से पीड़ित रोगियो
उपरोक्त उपचार से पूर्णत स्वस्थ होते मैंने देखा है।

बुखार की हालत में बहुत लोग केवल दूध पीकर रहते है; लेकि
मेरा अनुभव है कि वास्तव में बुखार के शुरू में दूध देने से हा
होती है, क्योंकि इसको पचाना कठिन है। यदि दूध देना हो
उसे गेहूँ की बनी कहवा के साथ थोड़ा दूध और चावल का आ
मिलाकर उसे अच्छी तरह पकाकर दिया जा सकता है, लेकि
अधिक ज्वर की दशा में इसे भी नही देना चाहिये। ऐसी अवस
में नीबू का रस बहुत ही गुणकारी होता है। ज्योंही रोगी
जीभ साफ हो जाय उसे उपरोक्त तरीके से केले का बनाया हु
पथ्य दे सकते है। यदि रोगी को दस्त न आता हो तो गर्म पा
में सुहागा मिलाकर पिचकारी देना चाहिए। उसके बाद जैतू
के तेल का प्रयोग उसके मेदे को साफ कर सकता है।

१४—कब्ज, संग्रहणी, पेचिस, बवासीर

इस प्रकरण में एक ही साथ चार रोगों पर विचार किया जात
है। पाठकों को इसमें कुछ आश्चर्य मालूम होगा, लेकिन वास्तव में
ये चारों रोग एक दूसरे से ऐसे सम्बन्धित है कि इनका उपचार

करीब-करीब एक ही ढङ्ग से किया जा सकता है। जब खाद्य-पदार्थ के न पचने से मेदा अधिक गन्दा हो जाता है तब इन रोगों में से कोई एक रोग मनुष्य के शरीर की अवस्था के अनुसार हो जाता है। किसी को कब्ज हो जाती है, दस्त साफ नहीं आता, दस्त लाने के लिए उन्हें जोर लगाना पड़ता है जिससे अन्त में खून आने लगता है तथा बवासीर का मस्सा निकल आता है। किसी-किसी को संग्रहणी का रोग हो जाता है किसी को पेचिस हो जाती है और पेट में दर्द के साथ आँव आने लगता है।

इन सभी अवस्थाओं में रोगी की भूख कम हो जाती है। उसका शरीर पीला और कमजोर होने लगता है। जीभ पीली पड़ जाती है और श्वास से दुर्गन्ध आने लगती है। किसी-किसी के सिर में पीड़ा होने लगती है। कब्ज का रोग इतना प्रचलित हो गया है कि उसके लिए सैकड़ों तरह की गोलियाँ और चूर्ण तैयार किये गये हैं। "मधर्स सिगल-सिरप" 'फ्रूट-साल्ट' इत्यादि इसी रोग की विशेष औषधि हैं। लाखों रोगी इसका प्रयोग करते हैं फिर भी रोग कम नहीं होता। साधारण से साधारण वैद्य या हकीम बतला सकता है कि अजीर्ण ही इस रोग का मूल कारण है तथा उसके निवारण का एकमात्र उपाय अजीर्ण को मिटाना ही है। सचमुच आजकल के विज्ञापनों में यहाँ तक लिखा रहता है कि "हमारी दवा में परहेज करने की आवश्यकता नहीं है। केवल दवा खाने ही से रोग दूर हो जायगा।" पाठकों को मालूम होना चाहिए कि इस तरह का विज्ञापन बिलकुल गलत है। जुलाब का प्रभाव बहुत बुरा होता है। मामूली जुलाब भी कब्ज को दूर कर शरीर में दूसरी जहर उत्पन्न कर देता है। जुलाब से भले ही कब्ज और संग्रहणी इत्यादि बीमारियाँ न हों, लेकिन उससे कोई अन्य बीमारी होने की अवश्य सम्भावना रहती है। यदि उससे कुछ लाभ हो ही जाय तो रोगी मनुष्य के जीवन और रहन-सहन में परिवर्तन हो जाता है। यदि

कोई खासी [illegible] बुरी आदतों का त्याग दें और फिर भी पेचिश में उपवास न लें तो कुछ लाभ हो सकता है। उपवास लेने से पुराना रोग भले ही दूर हो जाय लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि उसी प्रकार नया रोग हो जायेगा।

पेचिश के रोगी का सबसे पहला यह काम होना चाहिये कि जहाँ तक हो सके भोजन की मात्रा कम कर दे। ऐसे पदार्थ जैसे कि घी, मास्र, मक्खन वगैरह का तो उसे बिल्कुल ही परित्याग कर देना चाहिये। शराब, तम्बाकू, कम के आटे की रोटियाँ, मद, भांग, कहवा वगैरह तो उसे छूना भी नहीं चाहिये। उसका खाद्य-पदार्थ मुख्यतः फल और अंगूर का रस होना चाहिये।

किसी औषधि का प्रयोग करने से पहले रोगी को ३६ घण्टे तक उपवास करना चाहिये। उपवास के समय तथा उसके बाद मिट्टी की पुलटिस उसके पेडू पर बांधनी चाहिये और जैसे कि पहले कहा जा चुका है डा० कूने के मतानुसार उसे स्नान भी कराना चाहिये। रोगी को प्रतिदिन दो घंटे टहलना चाहिये। मैंने कितने ही बड़े संग्रहणी, पेचिश और बवासीर के रोगियों को इस साधारण उपचार से नीरोग होते देखा है। हो सकता है कि बवासीर बिल्कुल आराम न हो, लेकिन कम-से-कम उसका दर्द तो जाता ही रहेगा। पेचिश के रोगी को गर्म पानी में नींबू के रस के अतिरिक्त और कुछ नहीं खाना चाहिये, विशेषकर उस अवस्था में जब कि उसे आँव खून आता हो। यदि पेट में अधिक मरोड़ आती हो तो गर्म पानी से भरी बोतल या गर्म किया हुआ ईंट के टुकड़े से पेट को सेंकना चाहिये। इससे दर्द बिलकुल बन्द हो जाता है। रोगी को हर हालत में खुली हवा में रहना चाहिये।

कब्ज के रोगी को अंजीर, फेंच प्लम्स (बेर) बड़ा मुनक्का, नारंगी, केला, किशमिश और हरी दाख बहुत लाभ पहुँचाती है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि भूख न रहने पर भी ये फल

खाये जायं। पेट में मरोड होनी हो या मुह का स्वाद बिगड गया हो तो उस हालत में तो ये फल भी हरगिज नहीं खाना चाहिये।

—.०:—

१५–छूत के रोग शीतला (चेचक)

अब हम छूत के रोगो के उपचार के विषय में कुछ विचार करेंगे यो तो सभी छूत के रोग भयकर ही होते है, लेकिन चेचक का रोग सबसे भयकर होता है। इसलिये इसके सबध में इस प्रकरण में विशेष रूप से विचार किया जायगा और शेष रोगो का दूसरे प्रकरण में।

हम लोग शीतला रोग से बहुत ही डरते है और इसके विषय में हमारे कितने ही भ्रमपूर्ण विचार है। हम हिन्दुस्तानी इसे देवी मान इसकी पूजा-पाठ करते है। वास्तव में इस रोग का कारण भी मेदे की खराबी है। मेदे की खराबी के कारण हमारा खून खराब हो जाता है। हमारे खून में विष पैदा हो जाता है। यही चेचक का मूल कारण है। जब यही कारण है तो हमें इससे डरने की आवश्यकता नही है। यदि यह सर्वथा छूत का रोग होता तो दूसरे को भी रोगी के छूने मात्र से हो जाता, लेकिन बहुधा ऐसा नही होता। यदि हम लोग सावधानी के साथ रोगी को छूवें तो कुछ भी नुकसान नही हो सकता, लेकिन साथ ही हमें इस बात का विश्वास नहीं कर लेना चाहिए कि रोगी को छूने से छूने वाले को यह रोग हो ही नही सकता, क्योकि जिनके अन्दर यह विष पैदा हो जाता है उन्हें भी रोगी को छूने से यह रोग पैदा हो जाता है। यही कारण है कि जब कि किसी मोहल्ले में इस रोग का प्रकोप होता है तो अधिकाश आदमी इसी रोग के रोगी हो जाते है और हमें भ्रम हो जाता है कि यह एक छूत की बीमारी है इसी आधार

पर लोगों को यह समझा दिया जाता है कि यह छूत की बीमारी है, इस प्रकार लोगों को बहका कर टीका लगाया जाता है। उन्हें समझाया जाता है कि टीका लगाने से यह रोग नहीं होता। गाय के थन से चेचक का रस लगाकर उसमें से निकले हुए पीब को चमड़े द्वारा हमारे शरीर में प्रवेश कर देने का नाम टीका है। कहा जाता है कि ऐसा कर देने से मनुष्य के शरीर पर शीतला निकल आती है और फिर आगे उन्हें सदा शीतला का डर नहीं रहता।

लेकिन जब यह देखने में आया कि टीका लगाए हुए मनुष्य को भी चेचक निकल आती है तो एक नयी सूझ निकाली गयी और कहा जाने लगा कि अमुक समय के पश्चात् फिर टीका लगा लेना चाहिए, यहाँ तक कि आजकल सभी लोगों के लिये चाहे वे टीका लगवाये हों या नहीं, जब कभी उनके गाँव या मुहल्ले में चेचक का प्रकोप हो, टीका लगा लेना अनिवार्य है। अत: ऐसे बहुत मनुष्य मिलते हैं जो पाँच-पाँच, छ-छ या इससे भी अधिक बार टीका लगवाये हुए होते हैं।

टीका लगा लेना एक जंगली रिवाज है। हमारे वर्तमान समय की यह एक हानिकारक प्रथा है। संसार की जंगली जातियों में भी यह प्रथा नहीं है। इसके अधिकारी, जो टीका नहीं भी लगवाना चाहते, उन्हें कानून का भय दिखाकर टीका लगाने के लिये मजबूर करते हैं। यह बहुत पुराना आविष्कार नहीं है। बल्कि १७६८ ई० से ही यह प्रचलित है, लेकिन इतने थोड़े समय में ही लाखों मनुष्यों को यह विश्वास हो गया है कि टीका लगा लेने से चेचक के रोग से आदमी बच जाता है। ऐसा कोई नहीं कह सकता कि जिसे टीका नहीं लगाया गया है उसे अवश्य ही यह रोग होगा, क्योंकि बहुतेरे ऐसे मिलेंगे जिन्हें टीका बिलकुल ही नहीं लगाया गया है, और फिर

जब यह भी गलत हुआ तब दोनों पर कई स्थानों पर लगाया जाने लगा। साथ ही यह भी कहा जाने लगा कि सात वर्ष बाद इसे फिर से लेना चाहिए। क्योंकि सात वर्ष पश्चात् इससे मुक्ति पाने की कोई गारन्टी नहीं दी जा सकती। लेकिन अब तो तीन वर्ष के पश्चात् इसे लगाने की प्रथा निकली है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि डाक्टर लोग स्वयं इससे सन्तुष्ट नहीं हैं। सच बात तो यह है कि यह नहीं कहा जा सकता कि टीका लगवाये हुए मनुष्य को यह रोग कभी होगा ही नहीं, अथवा जिन्हें यह रोग हो जाता है वह टीका न लेने ही के कारण होता है।

(५) अन्त में हम यह दावे के साथ कह सकते हैं कि लस एक गन्दी तथा दूषित पदार्थ है। ऐसी हालत में कोई भी यह मानने को तैयार नहीं होगा कि गन्दगी से गन्दगी दूर होती है, और यदि हम ऐसा मानते हैं तो यह हमारी निरी मूर्खता है।

उस संस्था ने दलीलों के सिवा और भी अनेकों उदाहरण पेश करके लोगों को टीका लगवाने के विरुद्ध अपने पक्ष में कर लिया है। अंग्रेजों की बहुत ऐसी बस्तियाँ हैं जहाँ के अधिकांश लोग टीका नहीं लगाते और फिर भी वे इस रोग से बचे हैं। टीके को जारी रखने की अनुमति डाक्टरों की स्वार्थ-सिद्धि के लिए है, क्योंकि उन्हें प्रजा की ओर से लाखों रुपये इस काम के लिए मिल जाते हैं। इसी स्वार्थ ने उनकी आँखों पर पट्टी दे रक्खी है जिसके कारण टीका से उत्पन्न बुराइयों को देख नहीं पाते। हाँ कुछ ऐसे भी डाक्टर हैं जो इससे उत्पन्न बीमारियों को मानते हैं और इसके विरुद्ध हैं।

जो इसके सच्चे विरोधी हैं उन्हें चाहिये कि टीका न लेने के कारण उन पर जो कुछ भी कानूनी दण्ड लगाया जाय उसे सहन करें। जो स्वास्थ्य की दृष्टि से इसका विरोध करते हैं उन्हें इस विषय की काफी जानकारी रखनी चाहिए ताकि वे अपना अनुभव दूसरों को भलीभाँति समझा सकें, लेकिन उन्हें न तो इसकी कर्पट

शीतला रोग दूर हो जाने पर भी कितने रोगी बहुत कमजोर तथा किसी अन्य रोग में ग्रसित देखे जाते है । इसका मुख्य कारण चेचक से छुटकारा पाने के लिए किए गये गलत उपचार है । ज्वर में बहुतो को कुनैन सेवन से बहिरापन होता जाता है और कभी-कभी मज्जा-शून्य (बहरापन विशेष) का भी रोग हो जाता है । व्यभिचार से उत्पन्न होने वाले रोगो में पारा का प्रयोग किया जाता है । यह फल होता है, कि पारा उस रोग को दबा कर अन्य अनेक रोग पैदा कर देता है जिसे आजन्म भोगना पड़ता है । दस्त साफ न होने पर दस्त साफ न होने वाली औषधियो को बार-बार सेवन करने से बवासीर हो जाती है । उपरोक्त बातो से पता चलता है कि आरोग्य औषधियो के सेवन से बीमारी मिटने की अपेक्षा और कितनी ही नयी-नयी बीमारियाँ पैदा हो जाती है । अतः रोगो का उपचार बहुत सोच-समझ कर करना चाहिए । वे ही उपचार लाभदायक है, जो रोग को जड से हटा दें और स्वास्थ्य पर कोई हानि न पहुँचे । बहुमूल्य भस्म भी जो रोगो के लिए रामबाण औषधि समझे जाते है, बहुधा हानिकारक सिद्ध होते है, क्योंकि यद्यपि वे गुणकारी प्रतीत होते है, लेकिन वे काम को उत्तेजित करते है । फलतः स्वास्थ्य को बिगाड़ देते है ।

यदि चेचक ग्रस्त रोगी को उपरोक्त साधारण उपचार किया जाय तो केवल रोग ही नही दूर होगा, बल्कि रोगी शीघ्र स्वस्थ होकर आजन्म इस रोग से मुक्त हो जायगा ।

चेचक हट जाने पर जब दाने सूखने लगें तो रोगी के शरीर पर सदा "ऑलिव आयल" जैतून के तेल की मालिश करनी चाहिए तब उसे रोज स्नान कराना चाहिए । इससे घाव की भुरियाँ शीघ्र गिर जाती है, दाग मिटने लगते है और चमड़ा पहले जैसा होने लगता है ।"

—:०:—

१६--छूत के अन्य दूसरे रोग

छोटी शीतला से हम उतना नहीं डरते जितना कि उसकी बहन बड़ी शीतला से । क्योंकि हम सोचते हैं कि यह उतना घातक नहीं है और न इससे रोगी कुरूप ही होता है लेकिन यह भी एक प्रकार का चेचक ही है और इसका भी उपचार उसी तरह करना चाहिए जिस तरह शीतला का किया जाता है । शीतला, छोटी शीतला, के सिवा प्लेग, कालरा या हैजा और उड़ती पेचिश भी छूत के रोगों में शामिल हैं ।

प्लेग एक भयंकर रोग है । अंग्रेजी में इसे "ब्यूबानिक प्लेग" कहते हैं । यह रोग पहले-पहल हमारे देश में सन् १८६६ ई० में उत्पन्न हुआ और तब से अब तक इसने असंख्य आदमियों को मृत्यु की गोद में सुला दिया है । इससे छुटकारा पाने के लिए डाक्टरों ने अनेकों औषधियों का आविष्कार किया है, लेकिन फिर भी इसकी समुचित औषधि तैयार नहीं हो सकी है । आज-कल प्लेग का एक टीका निकला है और लोगों की धारणा हो रही है कि इसके लगाने से रोग का आक्रमण नहीं होता, लेकिन प्लेग का टीका भी उतना ही हानिकारक और धार्मिक दृष्टि से पापमय है जितना कि चेचक का टीका । यद्यपि इस रोग के लिए कोई औषधि विशेष रूप से तैयार नहीं हो सकी है, फिर भी हम उन लोगों के लिए जिन्हें प्रकृति में पूर्ण विश्वास है तथा जो मृत्यु से नहीं डरते, निम्नांकित उपचार करने की सलाह देंगे ।

(१) ज्यों ही बुखार शुरू हो पानी में भीगी चादर 'वेट-शीट पैक' का प्रयोग करना चाहिए ।

(२) गांठ (गिल्टी) निकलने पर मिट्टी की पुल्टिस बांधना चाहिए ।

(३) रोगी को पूर्ण उपवास करना चाहिए ।

(४) यदि उसे प्यास मालूम हो तो ठण्डे पानी में नीबू का रस मिला कर देना चाहिए ।

(५) उसे खुली हवा में सुलाना चाहिए ।

(६) रोगी के निकट एक से अधिक आदमी को उसकी देख-रेख के लिए नहीं रहना चाहिए ।

हम विश्वास दिला सकते हैं कि यदि प्लेग किसी उपचार से अच्छा हो सकता है तो वह इस उपचार से और भी शीघ्र अच्छा हो सकता है ।

यद्यपि इस रोग की उत्पत्ति के मुख्य कारण का अभी तक पता नहीं लग सका है, फिर भी लोगों का आम खयाल है कि इस रोग को अधिकतर चूहे फैलाते हैं । अतः हमें चूहों से हर तरह की सावधानी रखनी चाहिए । हमें अपने घर के खाने-पीने के सब सामान ढँक कर रखना चाहिए जिससे चूहों को वहाँ खाने की असुविधा हो और वे वहाँ से दूसरी जगह चले जायें । यदि किसी मुहल्ले में प्लेग का प्रकोप हो गया और बहुत प्रयत्न करने पर भी चूहों से हम अपना पिण्ड न छुड़ा सकें तो हमें चाहिए कि उस घर को कुछ दिनों के लिए खाली कर दें ।

प्लेग के आक्रमण से बचने का सबसे अच्छा उपाय स्वास्थ्य संबंधी नियमों का पालन करना है । हमें खुली हवा में सोना चाहिए । साधारणतया पोषक पदार्थ थोड़ी मात्रा में खाना चाहिए एवं घर को साफ-सुथरा रखना चाहिए । नित्य नियमित रूप से व्यायाम करना चाहिए । हर तरह के व्यसन छोड़ देने चाहिए और यथासाध्य साधारण जीवन व्यतीत करना चाहिए । यों तो हमें इस ढंग से सदैव ही रहना चाहिए, लेकिन यदि हम सदैव ऐसा न करें तो कम-से-कम प्लेग के दिनों में तो विशेष सावधानी रखनी ही चाहिए ।

सन्निपातिक ज्वर इससे भी भयंकर होता है। यह शीघ्र आक्रमण करता है और बहुत ही घातक होता है। रोगी को अधिक ज्वर हो जाता है, स्वास लेने से कष्ट मालूम होता है और कभी-कभी वह बेहोश हो जाता है। इस किस्म का रोग पहले-पहल जोहेन्सबर्ग में सन् १९०४ में शुरू हुआ था। इस बारे में पहले कहा गया है कि तेईस रोगियों में से केवल एक बच सका था। इस पर प्रायः वे सभी उपचार प्रयोग में लाये जा सकते हैं जो 'ब्यूनानिक प्लेग' पर काम में लाये जाते हैं, अन्तर इतना ही है कि पुलटिस इस रोग में सीने के दोनो बगल में बाँधना चाहिए। यदि 'वेड-शीट पैक' के प्रयोग करने का मौका न मिले तो पतली पुलटिस सिर में बाँधना चाहिए। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस रोग का उपचार करने से पहले इसके रोकने की व्यवस्था करनी चाहिए। प्लेग और उसके रोकने में प्राय एक से ही उपचार काम में लाये जाते है।

हम लोग कॉलरा या हैजा (महामारी) से भी उतना ही डरते है जितना कि प्लेग से, लेकिन यह रोग इतना भयानक नहीं है। इस रोग में 'वेड-शीटपैक' से कुछ लाभ नही होता। मिट्टी की पुलटिस रोगी के पेट पर बाँधना चाहिए। जिस अग में सनसनी मालूम होती हो उसे गरम पानी की बोतल से सेंकना चाहिए। पाँव में सरसो का तेल मलना चाहिये और रोगी को उपवास कर-वाना चाहिए। रोगी को घबड़ाहट न मालूम हो, इसकी सावधानी रखनी चाहिए। यदि उसे दस्त जल्द-जल्द आता हो तो उसे बार-बार बिस्तरे से नहीं उठाना चाहिए बल्कि एक चौड़े मुँह का बर्तन चारपाई के नीचे दस्त इकट्ठा करने के लिए रख देना चाहिए। यदि इस रोग में पहले से ही सावधानी रखी जाय तो खतरे का डर नहीं रहता। यह रोग गर्मी के दिनों में हुआ करता है, क्योंकि गर्मी के दिनों में हम किस्म-किस्म के कच्चे-पक्के फल खाते हैं। पानी भी उन दिनों में प्रायः गन्दा ही होता है और हम उसी को

पीते हैं, क्योंकि उन दिनों कुएँ का पानी कम हो जाता है। हम लोग पानी को उबाल कर अथवा छान कर नही पीते। रोगी के पाखाने को भी खुला छोड़ देते हैं। जिनका फल यह होता है कि रोग के कीड़े हवा में फैलते हैं। वास्तव में जब हम इस पर विचार करते हैं तो हमें मालूम होता है कि उपरोक्त विषयों पर हमारा बहुत कम ध्यान रहता है। फिर भी हम इन रोगों से वंचित रहते हैं। यह आश्चर्य की बात है।

हमें उन बातों पर विचार करना चाहिए जिनकी जानकारी कॉलरा के दिनों में हमारे लिए आवश्यक है। हमें उन दिनों हल्का भोजन करना चाहिए। स्वच्छ हवा में साँस लेनी चाहिए। जो पानी हम पीते हैं सदैव उबाल कर, मोटे कपड़े से छान कर पीना चाहिए। रोगी का पाखाना राख या मिट्टी से ढँक देना चाहिए। पाखाने को राख या मिट्टी से ढँकने की क्रिया तो हमें सदैव बिना रोक-टोक करनी चाहिए। ऐसा न करने से रोग के फैलने का डर रहता है। बिल्ली गढ़ा खोदकर पाखाना करती और उसे ढँक देती है, लेकिन हमलोग उससे भी बदतर हैं क्योंकि हम घृणा अथवा छुआछूत के फेर में पड़कर ऐसा न करके हम बीमारी को फैलाते हैं और हजारों मनुष्यों को मृत्यु के मुख में डाल देते हैं।

जिन लोगों को छूत का रोग हो गया हो उनके पास रहने वालों को चाहिए कि वे हर तरह रोगी को विश्वास दिलायें कि भय की कोई बात नहीं है, क्योंकि भय उत्पन्न होने से अक्सर रोगी को हानि पहुँचती है।

—•—

१७—सौरी और बच्चा

पिछले प्रकरणों के लिखने का मेरा उद्देश्य यही है कि साधारण रोगों के कारण और उनके उपचार का कुछ ज्ञान प्रायः सर्वसाधारण को हो जाय। हमें पूर्ण विश्वास है कि वे मनुष्य जिन्हें सर्वदा कोई-न-कोई रोग घेरे ही रहते हैं और जो मृत्यु के नाम से डरते हैं उनको किसी तरह की पुस्तक क्यों न दी जाय, वे डाक्टरों की शरण लिये बिना कदापि नहीं रहेंगे। हालाँकि मैं इसके विरुद्ध हूँ। मैं यह भी कह सकता हूँ कि बहुत थोड़े लोग ऐसे होंगे जो प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा अपने रोगों को अच्छा करके सर्वदा के लिए रोगमुक्त होने का उद्योग करते हैं। जो ऐसा करेंगे उन्हें इस बात का अनुभव होगा कि इन उपचारों और नियमों से बहुत लाभ होता है। इस पुस्तक को समाप्त करने के पहले हम कुछ मोटी-मोटी बातें और बच्चे की देख-रेख के विषय में बतलायेंगे। साथ ही कुछ आकस्मिक घटनाओं के बारे में भी लिखेंगे। पशुओं के बारे में हम कुछ नहीं जानते कि प्रसवकाल में उन्हें कुछ पीड़ा होती है या नहीं, किन्तु पूर्ण स्वस्थ स्त्री को तो प्रसवकाल में पीड़ा नहीं होनी चाहिए। देहात में बहुतेरी स्त्रियाँ प्रसव की पीड़ा की कुछ परवा नहीं करतीं और अन्तिम समय तक अपना काम करती हैं। बहुतेरी मजदूरी करने वाली स्त्रियों को प्रसव के थोड़े ही दिन बाद मजदूरी करते देखा जाता है। तब क्या कारण है कि शहर और कस्बे की स्त्रियों को ही प्रसव के समय इतनी पीड़ा होती है? क्या कारण है कि उन्हें प्रसव के पूर्व और पश्चात् उपचार की विशेष आवश्यकता पड़ती है।

उत्तर बहुत आसान और स्पष्ट है। शहर की स्त्रियों को अप्राकृतिक जीवन व्यतीत करना पड़ता है। उनका खान-पान, रहन-सहन साधारणतः स्वास्थ्य संबंधी प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध हुआ करता है। इसके अतिरिक्त वे असमय गर्भ धारण करती हैं और

प्रसव के बाद शीघ्र ही पुरुषों के शिकार हो जाती हैं । अत उन्हें बन्ध्यित्व का रोग हो जाता है । हमारे देश की लाखो कन्याओ और स्त्रियो की यह अवस्था हो रही है । मेरे विचार से ऐसा जीवन नर्क से भी बुरा है । जब तक पुरुष ऐसा पाशविक आचरण करते रहेंगे, हमारी स्त्रियाँ सुखी नही रह सकती । बहुत से लोग इस दोष को स्त्रियो के मत्थे मढते हैं, लेकिन यह किसका दोष है, इस पर विचार करने के लिए हमें यहाँ स्थान नही है, लेकिन हमें बुराइयो को देखना है और उससे छुटकारे का उपाय बतलाना है । सभी विवाहित स्त्री-पुरुष को यह याद रखना चाहिये कि जब तक वासना की तृप्ति की बुरी टेव, खास कर छोटी उम्र में गर्भ धारण कर लेने की बुरी प्रथा और बच्चा पैदा होने के बाद ही सम्भोग करने की आदत छूट न जायगी तब तक प्रसव की पीडा दूर नही हो सकती । स्त्रियाँ प्रसव की पीडा को चुप-चुप सहन करती है, यह नही सोचती कि स्वय उनकी इच्छा से ही ऐसा होता है उनकी सतान दुबली-पतली और कमजोर हो जाती है । प्रत्येक स्त्री-पुरुष का कर्तव्य है कि वे अपने को इस विपत्ति से बचावें । कम-से-कम यदि एक भी स्त्री-पुरुष इसका पालन करे तो इसका यह मतलब होगा कि वे अपना आदर्श दिखलाकर ससार को पतित अवस्था से उठा रहे हैं । यह एक ऐसा आवश्यक विषय है कि इसके लिये एक को दूसरे की प्रतीक्षा नही करनी चाहिए ।

उपरोक्त बातो से यही प्रतीत होता है कि गर्भ ठहर जाने के बाद पुरुष को स्त्री-प्रसग नही करना चाहिये और नौ मास तक तो स्त्री के ऊपर विशेष जिम्मेदारी रहती है । उसकी इस सन्तान का भविष्य सर्वथा उसके इन नौ महीने की रहन सहन पर निर्भर करता है । यदि वह अच्छी-अच्छी वस्तुएँ पसन्द करेगी तो भविष्य में उसकी होने वाली सन्तान भी उन्ही वस्तुओ को पसन्द करेगी । यदि वह क्रोध करेगी या उसके अन्दर बुरी-बुरी भावनायें उत्पन्न

होंगी तो उसकी सन्तान भी क्रोधी तथा बुरी भावना वाली होगी। अतः इस नौ महीने की अवधि में उस चाहिए कि वह अच्छे-अच्छे कार्य करें। व्यर्थ की चिन्ताओ को छोड़ दें, कोई बुरी वासना अन्दर न आने दें, कभी झूठ न बोलें और एक पल भी बेकार एवं बुरी बातों में न बितायें। ऐसी माता की सन्तान अवश्य बली और पराक्रमी होगी।

गर्भिणी को अपने शरीर और विचार को पवित्र रखना चाहिए। उसे स्वच्छ वायु में रहना चाहिए जिसे वह सुगमता से पचा सके। उतनी ही मात्रा में खाना चाहिए जिसे वह सुगमता से पचा सके। यदि भोजन सबधी सभी नियमो का वह पालन करेंगी तो उसे डाक्टर की सहायता की कोई आवश्यकता नही होगी। यदि उसे दस्त की शिकायत हो तो उसके भोजन में जैतून के तेल की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। यदि उसे कै आवे या जी मचलता हो तो पानी में नीबू का रस मिला कर लेना चाहिए, उसमें खाण्ड नही मिलाना चाहिए। गर्भावस्था के नौ महीनो में हर हालत में मसाला एवं बघार बिलकुल छोड़ देना चाहिए।

गर्भावस्था में स्त्रियों को नयी-नयी वस्तुओ के प्राप्ति की इच्छा होती है। ऐसी हालत में उन्हें डाक्टर लूईकूने के बताये हुए तरीके से स्नान करने से लाभ होता है। इससे उनका स्वास्थ्य और उत्साह बढ़ता है एव उन्हें प्रसव भी नही मालूम होती। गर्भावस्था में उनको अपने मन पर अधिकार रखना चाहिए। ज्यो ही किसी वस्तु की इच्छा पैदा हो, उसे शीघ्र दबा देना चाहिए। माता-पिता को चाहिए कि वे सदा गर्भस्त बच्चे की रक्षा के लिए सावधानी रखें।
पुरुष का कर्तव्य है कि वह ऐसी अवस्था में स्त्री को शान्तमय जीवन व्यतीत करने दे। किसी प्रकार की लड़ाई झगडा उससे न करे और सदा उससे प्रसन्न चित्त रखने की कोशिश करे। उसे

बच्चे को दस्त साफ आता है । इस तरह बच्चा भी रोग से बचा रहता है । यदि बच्चा बीमार हो जाय तो उसकी माँ के स्वास्थ्य की ओर ध्यान देना चाहिये । बच्चे को दवा देना उसे जानबूझकर मारना है, क्योंकि उसका मेदा नाजुक है जिससे दवा का जहर शीघ्र फैलता है । अत जो कुछ औषधि देनी हो तो माता को देनी चाहिये । औषधि का गुण उसकी माता के दूध में आकर बच्चे को लाभ पहुँचाता है । यदि बच्चे को कफ हो जाय या दस्त आवे तो डरने की कोई बात नहीं है । हमें एक दो दिन देख लेना चाहिये और उसके कारण का पता लगाना चाहिये । कारण मालूम हो जाने पर छुटकारे का उद्योग करना चाहिये सहसा इसके लिए दौड धूप कर दवा-दारू करने से और भी खराबी पहुँचेगी ।

बच्चे को गुनगुने पानी से स्नान कराना चाहिये । उसका वस्त्र यथासाध्य कम और पतला हो और यदि हो सके तो बिलकुल न पहनाये जायें । बच्चे को मोटे कपडे पर सुला कर गर्म चादर से ढँके रहना चाहिये । इससे कपडे पहिनाने की आवश्यकता पूरी हो जायगी और कपडे भी गन्दे होने से बचेंगे एव बच्चा भी बलवान होगा । नाल के ऊपर कपडे को चौपरता बनाकर रख दें और ऊपर से उसे दूसरे कपडे से मुलायम बाँध दें । नाल पर तागा बाँधकर उसे गले में लटकाने की प्रथा हानिकर है । नाल की पट्टी को खोलते रहना चाहिये । यदि नाल के इर्द-गिर्द नमी मालूम पडे तो बारीक पीसा हुआ स्वच्छ चावलों का आटा छान कर रूई के द्वारा उस पर छिडक देना चाहिये ।

जब तक बच्चे को माँ का दूध काफी मिलता हो उसे उसी पर रखना चाहिये, लेकिन जब कुछ कम पडने लगे तो भूने हुए गेहूँ को पीसकर गर्म पानी और थोडा सा गुड मिला कर मिलाने से दूध ही के जैसा लाभ होता है । आधा केले को खूब मसल लिया और उसमें एक चम्मच जैतून का तैल मिला कर देने से बडा होता है । अगर गाय का दूध देता हो तो एक भाग दूध में

वैसा ही होता है । यदि वे तुतला कर बोलते हैं तो वह भी वैसे ही बोलने लगता है । यदि बुरे शब्द का प्रयोग करते हैं और उनमें कुछ बुरी टेव पड़ गयी है, तो बच्चा भी उसी का अनुसरण करता है । तात्पर्य यह है कि माँ-बाप का कोई भी काम ऐसा नहीं, जिसको बच्चा करना न सीख जाय । बड़े-बड़े विद्वानों का यह कहना है कि माँ-बाप के पास रह कर बच्चे को जो शिक्षा मिलती है, वह फिर कभी नहीं मिलती ।

अब हम लोग समझ गये कि माँ-बाप की जिम्मेदारी बच्चे के प्रति कितनी भारी है । उनका मुख्य कर्त्तव्य है कि बच्चे को ऐसी शिक्षा दें जिससे वह सत्यवादी, ईमानदार और अपने समाज का आभूषण बन जाय । पशु और फल वगैरह के विषय में भी हम यही देखते हैं कि जो जिस नस्ल का है प्रायः उनसे उत्पन्न पशु या फल भी उन्हीं जैसे होते हैं । केवल मनुष्य ही प्राकृतिक नियम भङ्ग करता है । यह मानव समाज ही में देखा जाता है कि नेकचलन मनुष्य की सन्तान बदचलन होती है और बलवान की सन्तान प्रायः निर्बल हो जाती है । उसका यह कारण है कि हम बिना समझे-बूझे माँ-बाप बन जाते हैं जब कि हम उस पद के योग्य नहीं होते । माँ-बाप का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चों का उचित रीति से पालन-पोषण करें । यह तभी सम्भव हो सकता है जब माँ-बाप दोनों ही स्वयं उचित शिक्षा प्राप्त किये हों । जो माँ-बाप इस तरह की शिक्षा से वंचित हैं, उनका यह कर्त्तव्य होना है कि वे अपने बच्चों को किसी योग्य अभिभावक की देख-रेख में रख दें । ऐसा विश्वास करना निरी मूर्खता है कि बच्चों को केवल स्कूल भेज देने ही से वे सदाचारी बन जायेंगे । सदाचारी बनने के लिये उन्हें अच्छी संगति में रखना आवश्यक है । जो शिक्षा स्कूल में दी ... है वह घरेलू शिक्षा के बराबर बच्चे पर असर नहीं कर सकती । ... बात पहले ही बतलायी गयी है कि मुख्य शिक्षा जन्म-काल ही

पहले हम डूबे हुए मनुष्य का उपचार बतलायेंगे । हवा के बिना मनुष्य पाँच मिनट से अधिक नहीं जीवित रह सकता है । डूबने हुए मनुष्य को बाहर निकालने पर उसके अन्दर कुछ प्राण का सचार रहता है, अत शीघ्रातिशीघ्र उसे होश में लाने का प्रयत्न करना चाहिए । इसके लिये दो कामों का करना आवश्यक है । पहला–उसके अन्दर स्वांस आने-जाने का प्रयत्न किया जाय । दूसरा–उसे गर्मी पहुँचायी जाय । हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि पहला काम नदी या तालाब के किनारे ही करना पड़ता है जहाँ पर कि सब आवश्यक वस्तुओं का मिलना कठिन है । खासकर यह उपाय तभी किया जा सकता है जब कि वहाँ दो-तीन आदमी और हों । सहायक के लिए यह आवश्यक है कि वह समयसूचक, धैर्यवान और फुर्तीला हो । यदि वह स्वय घबड़ा उठेगा तो वह खुद भी मदद न कर सकेगा । ऐसे ही यदि सहायकगण उपचार के विषय में वाद-विवाद करने लगें तो उस मनुष्य के बचने की कम आशा रहती है । उनमें सबसे अधिक जानकारी रखने वाले को चाहिए कि वह अन्य सहायकों को बतलावे और सहायकों को चाहिए कि वे उसकी आज्ञानुसार कार्य्यवाही करें ।

डूबे हुए मनुष्य को ज्योंही पानी से बाहर निकाला जाय उसका बदन अच्छी तरह पोछ दिया जाय । उसके भीगे कपड़ो को उसके बदन से अलग कर देना चाहिए तब उसके दोनो हाथो को उसके सिर के नीचे कर उसे पट (औधा) सुला देना चाहिये । अपने हाथ को उसकी छाती पर रख उसके उसके मुह से पानी और मिट्टी वगैरह निकाल देना चाहिए । अब उसकी जीभ बाहर निकल आयेगी उसे रूमाल से पकड लेना चाहिए और तब तक पकडे रहना चाहिए जब तक वह होश में न आ जाय । होश में आते ही उसके सिर और छाती को पाँव से कुछ ऊपर कर उसे सीधा कर देना चाहिए । एक सहायक को उसके सिर की तरफ घुटनो के बल बैठ कर धीरे धीरे उसके हाथो को फैला लेना चाहिए । ऐसा करने से

इसकी घर्मामयी उठगी और श्वांस आने जाने लगेगा । इसके अलावा गर्म और ठंडे पानी को हाथ में लेकर उसके सीने पर छिड़कते रहना चाहिए । यदि आग मिल सके तो उसको गर्मी पहुँचाना चाहिए । इसके बाद जहाँ तक कपड़े मिल सकें उसको पहिना देना चाहिए जिससे उसके शरीर में गर्मी पहुँचे । ये सब उपचार पूर्ण आशा के साथ देर तक करना चाहिए । कभी-कभी तो यह घण्टों तक करना पड़ता है तब श्वांस आती है । ज्योंही साँस का आना आरम्भ हो, कुछ गर्म पदार्थ पिलाना चाहिए । नींबू का रस गर्म पानी में या तेज सौंफ और कालीमिर्च का काढ़ा पिलाने से बहुत लाभ होगा । तम्बाकू सुंघाने से भी उसे लाभ पहुँचता है । बेकार आदमी को उसके चारों तरफ नहीं घेरे रहना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से स्वच्छ वायु बीमार को नहीं मिलती । अतः इन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए ।

नीचे लिखे चिन्ह ऐसे रोगी के मर जाने के हैं –

यदि श्वांस का आना-जाना रुक जाय, हृदय और फेफड़े की धड़कन बन्द हो जाय, मोर के पंखे को उसके नाक के समीप रखने पर यदि जरा न हिले, शीशे को उसके मुँह के पास रखने पर यदि उस पर भाप न जमे, आँखें अधखुली रह जायँ, पलकें मोटी पड़ जायँ, जबड़े जुट जायँ, जीभ दाँतों के बीच में आ जायँ, मुँह में फेन आ जाय, नाक लाल हो जाय और सब शरीर पीला पड़ा जाय तो समझना चाहिए कि मर गया । कभी-कभी इन लक्षणों के होते हुए भी प्राण रहता है । जब उसकी लाश सड़ने लग तभी उसके मरने का निश्चय होता है । अतः रोगी को शीघ्र ही मरा न समझना चाहिए, बल्कि बहुत देर तक उसकी सेवा करने के बाद ही उसकी आशा छोड़नी चाहिए ।

जलना–कभी-कभी हम लोग कपड़े में आग लग जाने से घबड़ा

उठते हैं और उसे सहायता देने के बदले अपनी मूर्खता के कारण उसे और भी विपत्ति में डाल देते हैं, अत: ऐसी अवस्था में हमारा क्या कर्तव्य है यह जानना आवश्यक है।

जिस व्यक्ति के कपड़े में आग लग गयी हो उसे घबराना नहीं चाहिए। यदि आग कपड़े के एक ही किनारे को पकड़ी हो तो उसे शीघ्र ही हाथ से बुझा देना चाहिए। लेकिन यदि सम्पूर्ण या अधिक कपड़े में पकड़ ली हो तो उसे शीघ्र ही जमीन पर लेट कर लोटने लगना चाहिए। यदि कोई कम्बल जैसा मोटा कपड़ा मिले तो शीघ्र उसके बदन में लपेट देना चाहिए। यदि पानी नजदीक हो तो शीघ्र उसके ऊपर गिरा देना चाहिए। ज्योंही आग बुझ जाय हमें देखना चाहिए कि कहीं उसका अङ्ग तो नहीं जल गया है। जले हुए स्थान में बहुधा कपड़ा चिपक जाता है। ऐसी हालत में हमें उसे जोर लगा कर नहीं छुड़ाना चाहिए। बल्कि धीरे से उसे कैंची से काट लेना चाहिये ताकि जले हुए स्थान पर कुछ असर न पड़े और वहाँ का चमड़ा न सिमट जाय। इसके बाद शीघ्र ही उस स्थान पर मिट्टी की पुलटिस बांधनी चाहिए। इससे जलन कम होकर रोगी को आराम मिलेगा। जले हुए स्थान पर जहाँ कपड़ा लिपटा हो वहाँ भी पुलटिस बांधनी चाहिए। जब पुलटिस सूखने लगे तो तुरन्त बदल देना चाहिए। ठंडे पानी के उपयोग से भी कोई हानि नहीं होती।

जो मनुष्य जलने पर यथा समय उपरोक्त उपचार न कर सके तो उसके लिए निम्नांकित उपचार बहुत लाभदायक होंगे। केले के ताजे पत्ते पर जैतून या सरसो का तेल चुपड़ कर जली हुई जगह में बांधना चाहिए। पत्ते के अभाव में पतले कपड़े का प्रयोग कर सकते हैं। अलसी के तेल में चूना का पानी बराबर मिला कर लगाने से लाभ होता है। जले स्थान पर चिपके कपड़े को दूध या पानी से तर कर धीरे-धीरे निकाल सकते है। तेल की पतली पट्टी दो दिन बाद हटाना चाहिए और उसके बाद रोज बदलना चाहिए।

से उसका विष शरीर में तुरत फैल जाता जिससे आदमी शीघ्र मर जाता है। चूँकि मृत्यु का नाम ही भयानक है, अतः साँप से हमारा डरना स्वाभाविक है। वास्तव में हम डर ही के कारण सर्पों की पूजा किया करते हैं। यदि वह छोटा जीव होता तो इतना भयकर होने पर शायद हम उसकी पूजा नहीं करते, लेकिन चूँकि यह एक बड़ा और प्राणघातक जीव है, इसी से हम उसे पूजते हैं।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों का कहना है कि सर्प में कोई विशेष बुद्धि नहीं है, अत. जहाँ मिले वहीं इसे मार डालना चाहिए। सरकारी गणना से हमें पता चला है कि साँप के काटने से हर साल हिन्दुस्तान में करीब बीस हजार आदमी मरते हैं। जहरीला साँप मारने पर सरकार से इनाम मिलता है। लेकिन हमें यह देखना चाहिए कि इस प्रथा से देश को कुछ लाभ पहुँचा है या नहीं। अनुभव से पता लगा है कि साँप एकाएक किसी को नहीं काटता है, बल्कि छेड़ने पर काटता है। क्या इससे यह सूचित नहीं होता कि साँप में बुद्धि होती है ? सम्भव है यह बुद्धि का चिन्ह न माना जाय, लेकिन इससे वह निर्दोष अवश्य साबित होता है। अपनी रक्षा के लिए वह अपने दाँतों को काम में लाता है। मनुष्य भी बहुधा यही करते हैं। हिन्दुस्तान या किसी देश को साँप-रहित करने का प्रयत्न हवा से लड़ने के समान है। किसी खास स्थान में सर्पों का आना रोका जा सकता है। उन्हें मार डालने पर अन्य साँप वहाँ नहीं आवेंगे; लेकिन अधिकांश हिस्से में ऐसा नहीं किया जा सकता। हिन्दुस्तान जैसे विशाल देश में सर्पों को समूल नष्ट कर देने का प्रयत्न कभी भी सफल नहीं हो सकता।

हमें कभी भी नहीं भूलना चाहिये कि सर्पों को भी उसी ईश्वर ने पैदा किया है जिसने हमें और अन्य जीवों को पैदा किया है। हम ईश्वर के सभी कार्यों को नहीं समझ सकते। ईश्वर ने शेर, सर्प, बिच्छू इत्यादि को हमारे मारने के लिए नहीं पैदा किया है। अगर

की महान शक्ति है। बिना इसके ईश्वर की पूजा भी सार्थक नहीं होती। सारांश यह कि प्रेम ही सब धर्मों की जड़ है।

इसके अतिरिक्त सर्प या अन्य जीवों के क्रूर स्वभाव और उनकी उत्पत्ति को हमीं लोगों की क्रूरता क्यों न मानी जाय ? क्या हम लोग उनसे कम हिंसक हैं ? क्या हम लोगों की जबान उन्हीं के जबान जैसी विषैली नहीं है ? क्या हम लोग अपने भाई बन्धुओं को उन्हीं के ऐसा शिकार नहीं बनाते ? इन सब बातों से यही प्रतीत होता है कि जब मनुष्य दूसरे को नुकसान पहुँचाना छोड़ देंगे, अन्य जीव-जन्तु भी अपनी हिंसा प्रवृत्ति छोड़ देंगे और हमारे साथ मित्रवत् रहने लगेंगे। जब हमारे ही अन्दर सिंह और बकरी की लड़ाई सदैव चलती रहती है तो इसमें क्या आश्चर्य है यदि शरीर रूपी संसार में भी ऐसा ही युद्ध हुआ करे। मनुष्य जीवन ही संसार के सब जीवों में आदर्श माना गया है। अतः जब हम लोग अपने स्वभाव को बदल डालेंगे तो दुनिया के सभी लोग अवश्य ही अपने स्वभाव को बदल डालेंगे। जो मनुष्य अपने स्वभाव को स्वयं बदल लेता है उसके लिए दुनिया बदल जाती है। ईश्वर की सृष्टि तथा हमारी प्रसन्नता का यही रहस्य है। हमारी प्रसन्नता केवल हमारे ही ऊपर निर्भर करती है और इसके लिए हमें दूसरों पर अवलम्बित नहीं रहना चाहिये।

सर्पों के काटने पर उसके उपचार के विषय में लिखने की अपेक्षा सर्पों के विषय में इतना अधिक लिखने का यही कारण कि लोगों का भय उनसे मिट जाय। यदि इस पुस्तक के पढ़ने वालों में से एक भी जो मैं अब तक लिखता आया हूँ, उसके अनुसार चलेगा तो मैं [illegible] परिश्रम सफल समझूँगा। इसके अतिरिक्त इतने पृष्ठों के [illegible] का मेरा मतलब केवल वैज्ञानिक कल्पनाओं को ही दर्शाना

नही है बल्कि उसके मूल तत्त्व को ढूँढना है, और लोगों को आरोग्य-सन्देश देने पर विचार करना है ।

आधुनिक आविष्कारो से भी पता चलता है कि उस मनुष्य पर, जो पूर्ण स्वस्थ है, जिसका खून गर्म है और जिसका भोजन साधारण तथा सात्विक है, साँप का जहर जल्दी असर नही करता । जिसका खून दूषित और भोजन सात्विक नही है उस पर जहर का असर शीघ्र होता है । एक डाक्टर का कहना है कि जो मनुष्य नमक नही खाता और जिसका मुख्य भोजन फल है उसका खून इतना स्वच्छ होता है कि उसके ऊपर किसी भी विष का असर नही पड सकता । लेकिन मुझे स्वय इस बात का अनुभव नही है कि यह कहाँ तक सत्य है । जिस मनुष्य ने केवल एक-दो वर्ष से नमक खाना छोड दिया है उसका खून इस योग्य नही हो सकता क्योंकि पहले के खाये हुए नमक से उसका खून इतना दूषित हो गया है कि वह इतने थोडे दिनो के नमक परित्याग से शीघ्र शुद्ध नही हो सकता ।

वैज्ञानिक दृष्टि से देखा गया है कि जिसे अधिक भय या क्रोध हो उस पर विष का प्रभाव शीघ्र पडता है । सभी जानते हैं कि डर या क्रोध की अवस्था में मनुष्य की नाडी और हृदय में धडकन पैदा हो जाती है और नसो में खून का दौरा वेग से होने लगता है । वेग से दौरा होने के कारण खून में अधिक गर्मी पैदा हो जाती है जिससे मनुष्य के स्वास्थ्य पर धक्का पहुँचता है । क्रोध वास्तव में एक प्रकार का ज्वर है । अत साँप के विष की सबसे उत्तम औषधि कम मात्रा में सात्विक भोजन, बुरे भाव जैसे क्रोध-भय का परित्याग और ईश्वर पर पूर्ण भरोसा रखकर उचित उपचार करना है ।

पोर्ट-एलिजाबेथ अजायबघर के डाइरेक्टर फिट्जसीम जिन्होने अपना अधिकाश समय सर्पों के विषय में जानकारी प्राप्त करने में व्यतीत किया है और जो इस विषय के ज्ञाता कहे जाते है, जिन्होने

साफ साफ स्पष्ट किया है कि सांप के काटे मनुष्य की मृत्यु अधि-कांश में देरी, भय और अनुचित औषधियों के प्रयोग से होती है।

हमें याद रखना चाहिए कि सभी सांप एक जैसे विषैले नहीं होते और न सभी विषैले सांपों के काटने से विष का तीव्र प्रभाव ही होता है। इसके अलावा काटते समय इतना अवसर सांपों को नहीं मिलता कि वे रोगी के शरीर में अपने विष की थैली को उंडेल दें। इसलिए हमें जहरीला सांप भी काटे तो हमें डरना नहीं चाहिए, क्योंकि उसकी औषधि बहुत ही लाभदायक और सुगम है जिसका प्रयोग हम बिना किसी की सहायता के स्वयं कर सकते हैं।

जिस स्थान में सांप ने काटा हो उससे थोड़ा ऊपर खूब खींच कर बांध देना चाहिए और एक लकड़ी या मजबूत पेन्सिल से बल दे देना चाहिए। ऐसा करने से विष शरीर में फैलने नहीं पाता। तब एक पतले धारीले चाकू से उस स्थान को आध इंच गहरा काट देना चाहिये ताकि विषैला खून बाहर निकल आवे। इसके बाद कटे हुए स्थान में लाल या काला पाउडर जो बाजारों में बिकता है और जिसे परमेगनेट आफ पोटाश कहते हैं, उसी को भर देना चाहिए। यदि यह नहीं मिले तो खून को स्वय या किसी की सहायता से मुँह से चूस कर निकाल देना चाहिए। जिसके होंठ या जीभ पर घाव हो उसे नहीं चूसना चाहिये। यह उपचार काटने पर साढ़ मिनट के अन्दर-अन्दर करना चाहिए जिससे जहर बदन में न फैलने पावे। जैसे कि पहले ही बताया गया है कि एक जर्मन डाक्टर का जो इस रोग के लिए सिद्धहस्त माना जाता है कहना है कि रोगी को ताजी मिट्टी से ढँक देना चाहिए। यद्यपि मिट्टी के पुलटिस का प्रयोग मैंने इस विषय में नहीं किया है फिर भी उसमें मेरा पूर्ण विश्वास है, क्योंकि इसके लाभ को मैं अन्य रोगों में भी अनुभव कर चुका हूँ। पोटाश लगाने या खून चूसने के बाद मिट्टी की पुलटिस, जो आधी इंच मोटी हो, बांध देना

चाहिए। हर एक घर में अच्छी पिसी और सुखाई हुई मिट्टी एक टीन में प्रयोग के लिए तैयार रखनी चाहिए। इसे इस प्रकार रखें कि इसमें सूर्य की धूप और हवा लगती रहे और नमं न हो पावे। पट्टी के लिए कपड़ा भी रखना चाहिए ताकि जब आवश्यकता पड़े तुरन्त ही मिल जाय। यह केवल सांप के काटने पर ही काम न देगा बल्कि अन्यान्य रोगों में भी काम देगा।

यदि रोगी बेहोश हो गया हो या उसका श्वास चलना बन्द हो गया हो तो श्वास-संचार करने की क्रिया जो डूबने के विषय में बतलायी गयी है, काम में लानी चाहिए। गर्म पानी, सज और लौंग का काढ़ा होश में लाने के लिए बड़ा उपयोगी होता है। रोगी को खुली हवा में रखना चाहिये। लेकिन यदि उसका शरीर ठंडा मालूम हो तो गर्म जल से भरी बोतलों को प्रयोग में लाना चाहिये या फलालैन का टुकड़ा गर्म पानी में भिगोकर उसके बदन पर मलना चाहिये ताकि बदन में गर्मी आ जाय।

बिच्छू का काटना—यह कहावत प्रसिद्ध है 'ईश्वर न करे कि किसी को बिच्छू काटे' इस बात से भी सिद्ध होता है कि इसका काटना कितना दुखदाई होता है। वास्तव में इसका दर्द साँप से कहीं बढ़कर होता है। लेकिन हम लोग इससे डरते नहीं, क्योंकि इसमें मृत्यु का डर नहीं रहता। डा० मूर का कहना ठीक ही है कि जिसका खून स्वच्छ है उस पर इसके विष का असर नहीं होता।

इसका उपचार बहुत साधारण है। बिच्छू के काटे हुए स्थान को काट कर खून निकाल देना चाहिए। काटे हुए स्थान से कुछ ऊपर खींच कर बाँधना चाहिए। इसके बाद उस पर मिट्टी की पुलटिस बाँध देनी चाहिये। इसमें दर्द शीघ्र जाता रहेगा।

कुछ लेखकों का कहना है कि सिरका और पानी को बराबर-बराबर मिलाकर उसमें कपड़ा भिगोकर काटे हुए स्थान पर पट्टी बाँधनी

उपसंहार

स्वास्थ्य के विषय में मुझे जो कुछ कहना था, कह चुका। अब इसे समाप्त करने से पहले इस पुस्तक के लिखने के मुख्य उद्देश्य को विस्तृत रूप से बतलाता हूँ।

इस पुस्तक को लिखते समय मैंने इस प्रश्न पर बार-बार विचार किया कि इसे मैं क्यों लिख रहा हूँ। मैं न कोई डाक्टर हूँ और न मुझे इन विषयों का पर्याप्त ज्ञान ही है अतः अधिक सम्भव है कि मेरे विचार अधूरे रह गये हों।

इसका उत्तर यही हो सकता है कि वैद्यक विद्या का रहना ही अधूरा है। इसके अधिकांश विषय काल्पनिक ही हैं। ये प्रकरण निःस्वार्थ भाव से लिखे गये हैं। रोगों के उपचार की अपेक्षा उनके जड़ को अंकुरित न होने देने की इसमें अधिक चेष्टा की गयी है। थोड़ा-सा उद्योग करने से मालूम हो जायगा कि रोगों की उत्पत्ति को रोक देना साधारण सी बात है, इसमें अधिक जानकारी की आवश्यकता नहीं। हाँ, इतना अवश्य है कि उसका अभ्यास कुछ कठिन है। हमारा मुख्य उद्देश्य यही है कि रोग-उत्पत्ति के कारण एवं उपचार का पता लगाया जाय ताकि आवश्यकता पड़ने पर सब लोग स्वयं उसको कर सकें। यों तो स्वास्थ्य के नियमों के पालन करने की थोड़ी बहुत जानकारी सभी को होती है फिर भी यदि उसमें हमारा भी अनुभव शामिल कर लिया जाय तो कोई हानि नहीं होगी।

फिर भी अच्छे स्वास्थ्य की क्यों आवश्यकता है? इसके लिये हम इतना चिन्तित क्यों रहते हैं? हम लोगों की साधारण रहन-सहन [illegible] है कि हम लोग अपने स्वास्थ्य की ओर